आफरी दर्पण

वन अनुसंधान, शिक्षा एवं विस्तार की त्रैमासिक पत्रिका

जनवरी-जून, 2025

वर्ष 23, अंक 01-02

संरक्षक
डॉ. आशुतोष कुमार त्रिपाठी
निदेशक

सह-संरक्षक
डॉ. संगीता सिंह
समूह समन्वयक (शोध)

संपादक मंडल
डॉ. बिलास सिंह, श्रीमती कुसुम लता परिहार
श्री अमीन उल्लाह खान, श्री अजय वशिष्ठ

विशेष सहयोग
श्री धानाराम

भा.वा.अ.शि.प.-शुष्क वन अनुसंधान संस्थान
(ICFRE - ARID FOREST RESEARCH INSTITUTE)

(भारतीय वानिकी अनुसंधान एवं शिक्षा परिषद्, देहरादून,
पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, भारत सरकार की एक स्वायत्त संस्था)
जोधपुर (राजस्थान) - 342 005

Web Site: http://afri.icfre.gov.in

E-mail: dir_afri@icfre.org

निदेशक की कलम से ....

प्रिय पाठकों, नमस्कार !

मुझे यह सूचित करते हुए अत्यंत प्रसन्नता हो रही है कि मैं आफरी दर्पण पत्रिका के संरक्षक के रूप में यह कॉलम लिख रहा हूँ। मैंने 4 सितम्बर 2025 को आफरी के निदेशक का पदभार ग्रहण किया है।

2025 के आफरी दर्पण के दो संयुक्त अंकों की प्रति पाठकों के लिए प्रस्तुत है। इस प्रति में संस्थान के युवा वैज्ञानिकों द्वारा ज्ञानवर्धक एवं रोचक लेख प्रस्तुत किये गए हैं। प्रथम लेख में आफरी द्वारा किये गया ''नवप्राण'' नवाचार का वर्णन है। यह एक **ICFRE–AFRI**, जोधपुर द्वारा विकसित एक जैव-अपघट्य वृक्षारोपण कैप्सूल है, जो कि पौधशालाओं में पौध के तैयार करने हेतु उपयोग में ली जाने वाले को प्लास्टिक पॉलीबैग्स के स्थान पर उपयोग में लाया जा सकता हैं। साथ ही परित्यक्त ओपेन कास्ट खानों का पुनरुद्धार द्वारा खनन संचालन के दौरान उत्पन्न अपशिष्ट, विशेषकर ओवरबर्डन की समस्या, आज पर्यावरण के लिए एक गंभीर चुनौती के रूप में, इसके निराकरण के प्रयासों के इस लेख के में बताया गया हैं। मूल ग्रंथिका (**Root Nodules**) की उपयोगिता, थार रेगिस्तान का अमूल्य उपहार ''केर'', सेनेगालिया सेनेगल, विथानिया कोगुलांस (पनीर फूल) एवं इसके औषधीय महत्व एवं ''सैप फ्लो मीटर'' का वृक्षों में जल उपयोग का आकलन किस प्रकार किया जाता है। प्रस्तुत अंक में संस्थान द्वारा समय समय पर आयोजित करी जाने वाली विभिन्न गतिविधियों का संक्षिप्त विवरण भी प्रस्तुत किया गया है। आशा है कि यह अंक पाठकों के लिए रुचिकर और ज्ञानवर्धक सिद्ध होगा। इस पत्रिका में विज्ञान/वानिकी/पर्यावरण से संबंधित लेख, शोध-कार्य और कविताएँ प्रकाशित कराने हेतु पत्रिका में दिए गए पते पर ईमेल/डाक द्वारा भेजी जा सकती हैं।

शुभकामनाओं सहित,

(डॉ. आशुतोष कुमार त्रिपाठी)

संक्षिप्त परिचयः डॉ. आशुतोष कुमार त्रिपाठी निदेशक आफरी

डॉ. आशुतोष कुमार त्रिपाठी, वैज्ञानिक-जी ने आफरी निदेशक का पदभार 4 सितम्बर, 2025 को ग्रहण किया। इससे पूर्व डॉ. त्रिपाठी वन अनुसंधान संस्थान, देहरादून में सम विश्वविद्यालय, वन अनुसंधान संस्थान के रजिस्ट्रार/कुलसचिव के पद पर कार्यरत रहे। डॉ. त्रिपाठी ने भारतीय वानिकी अनुसंधान एवं शिक्षा परिषद् की उष्ण कटिबंधीय वन अनुसंधान संस्थान, जबलपुर (म.प्र.) में वैज्ञानिक-बी के पद से अपने करियर की शुरुआत 7 अक्टूबर, 1992 से करी। जुलाई 2001 में वन अनुसंधान संस्थान, देहरादून स्थानांतरित हुए और वन पारिस्थितिकी, पर्यावरण, वायु प्रदुषण, जल प्रदुषण एवं ठोस आधार प्रबंधन पर विभिन्न परियोजनाओं को पूर्ण किया हैं। डॉ. त्रिपाठी ने विगत 32 वर्षों से परिषद् के विभिन्न महत्वपूर्ण पदों पर अपनी सेवाएं दी है। देश के विभिन्न प्रान्तों में वानिकी एवं पर्यावरण सम्बंधित सेमिनार/वर्कशॉप में भागीदारी के साथ सफल आयोजन भी किया हैं।

आवरण चित्र : नीम का वृक्ष डॉ. देशा मीना, वैज्ञानिक-ई के सौजन्य से

नवप्राण: सतत वनीकरण की ओर एक अभिनव पहल

तरुण कांत[1], अदिति टेलर[1], सूर्यनारायण मूर्ति मिडडे[2], सोहन लाल गर्ग[2]

1-आनुवांशिकी एवं वृक्ष सुधार प्रभाग, 2-वन सर्वंधन प्रभाग

विगत वर्षों में भारत में वनीकरण संबंधी गतिविधियाँ उल्लेखनीय रूप से बढ़ी हैं, जो बदलते पर्यावरणीय दृष्टिकोण, जलवायु परिवर्तन, लुप्त होते वनों तथा वायु प्रदूषण जैसी गंभीर वैश्विक चुनौतियों के प्रति राष्ट्रीय स्तर पर उत्पन्न हुई जागरूकता को दर्शाती हैं। वैश्विक जलवायु परिवर्तन में वनों की अंधाधुंध कटाई का योगदान लगभग 17 प्रतिशत आँका गया है। ऐसे परिप्रेक्ष्य में वृक्षारोपण केवल पर्यावरणीय संरक्षण की दिशा में एक उपाय नहीं, बल्कि समय की अनिवार्य माँग बन चुका है।

वृक्ष न केवल कार्बन डाइऑक्साइड का शोषण कर वायुमंडल को शुद्ध करते हैं, अपितु जैव विविधता के संरक्षण, भूमि क्षरण की रोकथाम तथा पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसी कारण, कार्बन उत्सर्जन, जैव-विविधता के क्षरण और पारिस्थितिकी संकटों के समाधान हेतु देशव्यापी स्तर पर वृक्षारोपण अभियान तेजी से विस्तार पा रहे हैं। इन प्रयासों को CAMPA निधियों, औद्योगिक CSR योजनाओं, राज्य सरकारों के हरित अभियानों तथा निजी संगठनों के सहयोग से सशक्त आधार प्राप्त हो रहा है।

इस अभियान को अभूतपूर्व गति उस समय मिली जब 5 जून, 2024 को विश्व पर्यावरण दिवस के अवसर पर माननीय प्रधानमंत्री द्वारा #एक#पेड़#मां#के#नाम (#Plant4Mother) नामक वृक्षारोपण अभियान की घोषणा की गई। इसके अंतर्गत 80 करोड़ पौधे सितंबर 2024 तक तथा 140 करोड़ पौधे मार्च 2025 तक लगाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है।

ऐसे विशाल अभियान की सफलता के लिए एक सशक्त एवं सुदृढ़ पौधशाला व्यवस्था अनिवार्य है। देश भर की सरकारी एवं निजी नर्सरियाँ इस दिशा में निरंतर कार्यरत हैं। किंतु, पौधों को प्राय: प्लास्टिक पॉलीबैग्स में तैयार किया जाता है, जो एक ओर वृक्षारोपण के प्रयास को आगे बढ़ाते हैं, परंतु दूसरी ओर अपशिष्ट उत्पन्न कर पर्यावरण को हानि भी पहुँचाते हैं। इस समस्या के समाधान हेतु ऐसे वैकल्पिक उपायों की आवश्यकता है जो जैव अपघट्य (biodegradable) हों और शून्य-अपशिष्ट सिद्धांतों का पालन करते हों।

इस दिशा में एक अभिनव एवं पर्यावरण-अनुकूल समाधान प्रस्तुत किया गया है ''नवप्राण'' (NAVPRAN) - जिसका पूर्ण रूप है Nutrient-rich Active Vital Plantation Regenerative Afforestation Nest (NAVPRAN) 'नवप्राण', अर्थात ''नवजीवन'', ICFRE–AFRI, जोधपुर द्वारा विकसित एक जैव-अपघट्य वृक्षारोपण कैप्सूल है, जिसमें नीम पत्ती कंपोस्ट, नीम तेल, नीम खली, नारियल भूसी तथा गोबर जैसे पूर्णत: प्राकृतिक व पोषक तत्व सम्मिलित हैं। यह कैप्सूल न केवल पौधों की प्रारंभिक वृद्धि को पोषित करता है, बल्कि प्लास्टिक पॉलीबैग्स के उपयोग की आवश्यकता को पूर्णत: समाप्त करता है।

नवप्राण का स्थायित्व ऐसा है कि यह नर्सरी में पानी देने पर विघटित नहीं होता, और रोपण के समय सम्पूर्ण कैप्सूल को मिट्टी में समाहित किया जा सकता है। इसकी डिजाइन पारंपरिक मिट्टी के गमले के आकार की तर्ज पर है तथा यह दो-तीन वर्षीय या एक-दो फीट ऊँचाई वाले पौधों के लिए उपयुक्त है। भविष्य में इसके बड़े संस्करणों को विकसित करने की योजना भी प्रस्तावित है।

17 जून 2025 का विश्व मरुस्थलीकरण और सूखा रोकथाम दिवस (WDCDD) के अवसर पर, माननीय केंद्रीय पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री श्री भूपेंद्र यादव द्वारा, माननीय केंद्रीय संस्कृति एवं पर्यटन मंत्री, श्री गजेन्द्र सिंह शेखावत, तथा अन्य गणमान्य अतिथियों की उपस्थिति में, इस नवाचार अर्थात नवप्राण का औपचारिक प्रमोचन आफरी, जोधपुर में किया गया। इस समारोह में आफरी द्वारा विकसित उन्नत शिशम क्लोन (AFRI-DS1, AFRI-DS2) तथा (AFRI-DS4) का नवप्राण में रोपण कर किसानों में वितरण किया गया। आफरी द्वारा यह पहल भारत में वनीकरण को प्लास्टिक-मुक्त बनाने के साथ-साथ शून्य-अपशिष्ट, दीर्घकालिक पर्यावरणीय संरक्षण की दिशा में भी सशक्त कदम है।

नवप्राण जैसी अभिनव तकनीकों के समन्वय से भारत का वृक्षारोपण अभियान अब वृक्षारोपण के पारंपरिक दायरे से बाहर निकलकर व्यापक, समावेशी और सतत बन गया है। प्रत्येक पौधा जो नवप्राणके माध्यम से लगाया जाएगा, वह केवल हरियाली का प्रतीक नहीं, बल्कि नवजीवन, नवदृष्टि और नवप्रतिबद्धता का परिचायक बनेगा। नवप्राण एक स्वच्छ, हरे-भरे और प्लास्टिक-मुक्त भारत की ओर अग्रसर आफरी द्वारा एक पहल है ।

भारतीय स्वर्ग का वृक्ष : अरडू (*एलियन्थस एक्सेलसा*) एक कृषि वानिकी महत्व का वृक्ष

नीलम वर्मा, शिवानी भटनागर और देशा मीना

वन संरक्षण प्रभाग

परिचय

एलियन्थस एक्सेलसा रोक्सब. (*Ailanthus excelsa*) आमतौर पर अरडू (सिमरौबेसी परिवार) के रूप में जाना जाता है, यह एक द्विलिंगी प्रजाति (डायोसियस) प्रजाति है इसलिए कुछ पेड़ (मादा पेड़) फल देते हैं और अन्य (नर पेड़) बीज पैदा नहीं करते हैं। यह भारत के शुष्क और अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों में तेजी से बढ़ने वाली, औषधीय रूप से महत्वपूर्ण और बहुउद्देशीय वृक्ष प्रजाति है। इसे महानिम्बा और महारुख के नाम से भी जाना जाता है। यह एक बड़ा, पर्णपाती पेड़ ;कमबपकनें जतममद्ध है जो 24 मीटर तक ऊँचा और 2.5 मीटर तक सीधा बेलनाकार फलक वाला होता है। यह वृक्ष बर्मा, पाकिस्तान, बांग्लादेश, मलेशिया, श्रीलंका, मध्य, पश्चिमी और दक्षिणी भारत में पाया जाता है। भारत में यह मध्य प्रदेश, गुजरात, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, बिहार, महाराष्ट्र, राजस्थान और हरियाणा में पाया जाता है। विशेष रूप से संस्थान के कार्य क्षेत्र गुजरात में, यह एक प्रमुख प्रजाति है जो वन के अलावा कुल पेड़ों का एक तिहाई हिस्सा है। राजस्थान में अरडू सीकर, जयपुर, अजमेर, टोंक, दौसा, उदयपुर झुंझुनू, भरतपुर, नागौर, अलवर, करौली, स्वाई-माधोपुर, बूंदी और कोटा में पाया जाता है। यह बांसवाड़ा, बाड़मेर, चूरू, जोधपुर और माउंट आबू, सिरोही के शुष्क इलाकों में भी होता है।

अरडू नमक-सहिष्णु प्रजातियों जैसे खैर, सफेद बबूल, नीम के साथ पाया जाता है और सरंध्र दोमट मिट्टी पर अच्छी तरह से पनपता है। यह कठोर शुष्क पारिस्थितिकी तंत्र के अनुसार अनुकूलित है और इसे सूखे के समय के लिए एक महत्वपूर्ण वृक्ष प्रजाति (MPTS-Multipurpose Tree Species) माना जाता है। इस पेड़ की गहरी छाया के कारण इसे सड़क के किनारे (वृक्ष वीथि के रूप में) लगाया जाता है और इसका उपयोग कटाव रोकने के उद्देश्यों के लिए किया जा सकता है। अरडू वृक्षारोपण ने जलवायु परिवर्तन के कारण हो रहे जलवायु मापदंडों में बदलाव को धीमा करके पारिस्थितिकी तंत्र को बनाए रखने में भी मदद करता है।

शुष्क पारिस्थितिकी तंत्र में इस पेड़ का उपयोग सामाजिक वानिकी, कृषि वानिकी, एक सजावटी पेड़, सड़क के किनारे (वृक्ष वीथि) वृक्षारोपण, वातरोधक/वायुरोध काष्ठ प्रतिबंधित वन, औद्योगिक वृक्षारोपण, बंजर भूमि वनीकरण, रेशम के कीड़ों के पालन के लिए, पुनर्वनीकरण में रोपित वृक्ष के रूप में किया जाता है।

इसकी लकडी हल्की सफेद चिकनी तथा हल्के पीले रंग की होती है। इसके हल्के वजन के कारण, इसका उपयोग विशेष रूप से कैटामरैन, छोटी नाव, मछली पकड़ने की नाव बनाने के लिए किया जाता है। लकड़ी का उपयोग बड़े पैमाने पर कुटीर उद्योगों में, माचिस उद्योग, कागज उद्योग, खिलौने, क्रिकेट बैट बनाने के लिए किया जाता है। अरडू का औषधीय महत्व भी है और इसका उपयोग कसैले, ज्वरनाशक, उदर-विकार, कृमिनाशक, ऐंठनरोधी, कफनाशक/ कफ निवारक के रूप में किया जाता है साथ ही और ब्रोंकाइटिस, सर्दी, खांसी, त्वचा रोग, मलाशय की परेशानी, दस्त, पेचिश, जलोदर, त्रिदोष के कारण बुखार के इलाज के लिए, गिनी-कृमि, सर्पदंश आदि रोगों के निवारण में और एक प्रभावी गर्भनिरोधक के रूप में भी किया जाता है (कुमार एट अल. 2010)।

इसकी पत्तियों का उपयोग *ऐडाटोडा ज़ेलेनिका /ऐडाटोडा वासिका* नीस के लिए मिलावट के रूप में किया जाता है। इसे राजस्थान में भेड़ और बकरियों के लिए अधिक स्वादिष्ट और पौष्टिक चारे के रूप में दर्जा दिया गया है। एक औसत पेड़ से साल में दो बार लगभग 500-700 किलोग्राम हरी पत्तियों की पैदावार होती है।

अरडू रोपण की लागत लाभ

अरडू का पूर्णतः चक्रानुक्रम 20 वर्ष माना जाता है लेकिन यह 30 वर्ष या उससे अधिक समय का भी देखा गया है। कटाई -छंटाई चौथे वर्ष से शुरू की जाती है; यानी एक पेड़ से पत्ती का चारा कम से कम 20 साल तक मिलता है। यह अनुमान लगाया गया है कि एक औसत पेड़ 5, 10 और > 20 साल की उम्र में प्रति वर्ष क्रमशः लगभग 100, 200 और 400 किलोग्राम हरी पत्ती का चारा देता है (राजसुगुणसेकर एट अल 2019)। यह देखा गया कि सात साल के बाद कटाई से अच्छा चारा और बेहतर उपज मिलती है। कुटीर उद्योगों के लिए अरडू की कटाई नवंबर-दिसंबर माह में करनी चाहिए।

अरडू में लगने वाले विभिन्न रोग

वनीकरण उद्देश्यों के लिए स्वस्थ रोपण स्टॉक सामग्री (planting stock material) जुटाने में नर्सरी रोग महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। पौधों के विकास के विभिन्न चरणों में उन पर अनेक रोगजनक (कवक और कीट) आक्रमण करते हैं। उचित समय पर रोग का निदान करना और उचित नियंत्रण उपाय अपनाना बहुत आवश्यक है। रोग मुक्त, स्वस्थ पेड़ पौधे उगाना न केवल एक अच्छे नर्सरी स्टॉक को बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण है बल्कि बेहतर उत्पादकता के लिए क्षेत्र में एक स्वस्थ स्टैंड स्थापित करने के लिए भी आवश्यक है। अरडू में बीज, तने, जड़ एवं पत्तियों में होने वाले मुख्य कवक / कीट रोग उनके लक्षण एवं प्रबंधन की सम्भावनाएँ इस प्रकार हैं।

क्र.सं.	रोग/कीट का नाम	कारण	लक्षण	नियंत्रण उपाय
पौधशाला में लगने वाले रोग (In Nursary)				
1.	आद्र पतन (Damping off)	*राइजोक्टोनिया, फ्यूजेरियम* (मिट्टी जनित कवक)	बीज/अंकुर भूमि की सतह पर गिर जाते हैं व मर जाते हैं।	बेविस्टिन (0.01%), डाइथेन-एम-45 (0.01%), इमिसान-6 (0.0025%) का घोल; जल जमाव रोकें (20 दिन के अंतराल पर पुनः प्रयोग)
2	*अटेवा फैब्रिसेला* (जाला कृमि)	*अटेवा फैब्रिसेला* कीट के लार्वा	लार्वा रेशम के जाल में पत्तियों पर एकत्रित रहते हैं; भारी पतझड़	स्पिनोसैड 45% SC का 0.001% पर्ण स्प्रे; ब्रैकीमेरिया हीम परजीवी (Roy Choudhary et al., 2009, Roy Choudhary & Mishra, 2020)
3	*एलिग्मा नार्सिसस*	*एलिग्मा नार्सिसस* कीट के लार्वा	नई व पुरानी पत्तियाँ खाते हैं; पत्तियाँ गिरने का कारण बनती हैं	*पेसिलोमाइसेस फ़ारिनोसस*-एंटोमोपैथोजेनिक कवक (R.V. Verma, 1986)
विभिन्न वन मंडलो में लगने वाले रोग (In plantation)				
4	पर्ण चकत्ता (Leaf Spot)	*आल्टरनेरिया* spp., *सर्कोस्पोरा* spp., *फोमा मेडिकोगिन्स* कवक	पत्तियों पर भूरे चकत्ते; पत्तियाँ समय से पहले गिरती हैं	बेविस्टिन/डाइथेन एम-45/ब्लाइटॉक्स 0.2% का पत्तियों पर छिड़काव
5	सफेद चूर्ण रोग (Powdery Mildew)	*ओव्युलेरियोपसिस* spp., *ओडियम एलिएन्थाई*	पत्तियों की दोनों सतहों पर सफेद चूर्ण जैसी वृद्धि	केराथन/कैलीक्सिन (0.05%) का छिड़काव हर 20 दिन में (नायक और अन्य, 2019)
6	शीर्षारम्भी क्षय (Die-back)	*बोट्रिओडिप्लोडिया* थियोब्रोमी कवक	पौधे के शीर्ष भाग पर कीटो के रस चूसने के कारण क्षति; तने की छाल फटना	ब्लाइटॉक्स/डाइथेन एम-45 0.2% छिड़काव; चूना लेप या चौबटिया पेस्ट; पौधे को सूर्यताप से बचाएँ
7	अंतः सड़न (Heart Rot)	*नेविस्पोरस फ्लोकोसस* कवक	वृक्ष की अंतः काष्ठ नष्ट होती है	कोई प्रभावी कवकनाशी नहीं; उचित प्रबंधन तकनीकों से पेड़ को स्वस्थ रखें (नागादेसी और अरुण आर्य, 2014)
8	वर्टिसिलियम विल्ट	*वर्टिसिलियम एल्बो-एट्रम* कवक	पत्तियाँ मुरझाना व गिरना	संक्रमित क्षेत्र में रोपण न करें; संक्रमित पेड़ को नष्ट करें *स्यूडोमोनास* व *बैसिलस* spp. का उपयोग (Deketeleare et al., 2017)
9	जड़ सड़न (Root Rot)	*आर्मिलारिया मेलिया, इनोनोटस हिस्पीड्स* (Bull) P. Karst	लकड़ी की गुणवत्ता में गिरावट	संक्रमित क्षेत्र में रोपण से बचें; रोकथाम पर ध्यान दें (Koyani et al., 2010)
मुख्य इन्सेक्ट पेस्ट				
(i)	निष्पत्रक कीट (डिफोलिएटर्स):	*अटेवा फैब्रिसेला* (ऐलेन्थस वेबवर्म)	फलों, बीजों और पत्तियों को हानि पहुंचाता है, बार-बार पत्ते गिरने से पेड़ों की वृद्धि पर असर पड़ता है।	सुमिसिडिन (0.0-0.02 %) का छिड़काव
(ii)	बोरर्स	*बटोसेरा रुफोमेकुलाटा* कीट	युवा पेड़ों के तनों में छेद करता है। कीड़ों के कारण कभी-कभी तने का निचला हिस्सा पूरी तरह खोखला हो जाता है और पेड़ हवा से गिर जाता है।	खोखले तनो में मिट्टी के तेल या ईंधन तेल का छिड़काव या टनलों को मिट्टी के तेल से संतृप्त कपास से बंद कर दिया जाता है।
		डिबोमा प्रोसेरा	एक ग्रब है जो नई टहनियों में छेद करता है और लंबी सुरंगें बनाता है।	प्रभावित शाखाओं को काटकर नष्ट कर दें और कटे हुए सिरों पर 5% कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (50 ग्राम/लीटर पानी) प्रयोग करें (गुंडप्पा और बालाजी राजकुमार, 2014)। इमिडाक्लोप्रिड 17.8: एसएल / 1.0 मिली/लीटर पानी या थायोमेथोक्सेम 25: डब्ल्यूजी / 1.0 ग्राम लीटर पानी के प्रयोग से इसके नियंत्रित किया जा सकता है (उपाध्याय और अन्य, 2013)।

निष्कर्ष और भविष्य का परिप्रेक्ष्य

अरडू किसानों की आजीविका में सहायता और उनके पशुओं के लिए चारे की आवश्यकता की पूर्ति के लिए कृषि वानिकी एक विकल्प के रूप में महत्वपूर्ण है। अध्ययनों ने पुष्टि की है कि मादा पेड़ बेहतर और अधिक उत्पादक प्रदर्शन करते हैं। इसलिए, अरडू को मुख्य कृषि वानिकी वृक्ष के रूप में लकड़ी और चारे की पैदावार में सुधार के लिए चयनित मादा पेड़ों का क्लोन बनाने की संस्तुति की जाती है। साथ ही राइजोबैक्टीरिया और पर्यावरण अनुकूल कीट और रोग प्रबंधन तकनीकों को शामिल करके उन्नत रोपण स्टॉक का प्रदर्शन परीक्षण किया जाना चाहिए।

कृषि-जलवायु क्षेत्र 13 और 14 से नीम के उच्च तेल उपज वाले जीनोटाइप की पहचान

देशा मीना एवं तरुण कांत

अनुवांशिकी एवं वृक्ष सुधार प्रभाग

परिचय

आज के समय में, जब लोग प्राकृतिक और स्वच्छ जीवनशैली की ओर बढ़ रहे हैं, तो *Azadirachta indica* (नीम) पहले से कहीं अधिक बढ़ गया है। नीम की पतियों का धार्मिक अनुष्ठानों में उपयोग होने के कारण भारतीय संस्कृति में इसे पवित्र वृक्ष माना गया है। नीम का पेड़, महोगनी परिवार (Meliaceae) का सदस्य है। यह भारतीय उपमहाद्वीप का मूल निवासी है, इसे मुख्य रूप से एशिया, अफ्रीका, अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया और दक्षिण प्रशांत द्वीपों के शुष्क उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में व्यापक रूप से वितरित किया गया है। भारत में नीम का वितरण देश के लगभग सभी हिस्सों में देखा जा सकता है, विशेष रूप से शुष्क और अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों में। यह विषम जलवायु परिस्थियों में भी जीवित रह सकता है जिससे यह भारत के विभिन्न भागों में पनपता है। नीम के पेड़ में जैविक रूप से सक्रिय यौगिकों (एजाडिरेक्टिन, मेलियासिन, गेडुनिन, निम्बिडिन, निम्बोलाइड्स, सैलानिन, निम्बिन, वैलासिन) की एक विस्तृत श्रृंखला होती है जिनमे रसायनिक और संरचनात्मक दृष्टि से विभिन्नता पायी जाती है। नीम के पत्ते, बीज, छाल और तेल में बैक्टीरियल, एंटीफंगल, एंटीवायरल और एंटी-इंफ्लेमेटरी गुण पाए जाते हैं, जो इसे विभिन्न प्रकार की बीमारियों के उपचार में प्रभावी बनाते हैं। नीम का महत्व न केवल स्वास्थ्य और चिकित्सा में है, बल्कि यह पर्यावरण, कृषि, अर्थव्यवस्था और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से भी अत्यधिक महत्वपूर्ण है। दैनिक जीवन में विविध उपयोगों के कारण नीम को 'अमृत वृक्ष' भी कहा जाता है। नीम का तेल एक महत्वपूर्ण पारंपरिक औषधि है और इसका उपयोग कृषि में प्राकृतिक कीटनाशक के रूप में दशकों से किया जा रहा है। नीम के बीज में टिग्निक एसिड भी होता है जो तेल की विशिष्ट गंध के लिए जिम्मेदार होता है। नीम का तेल, पाउडर कीटों और कीड़ों से फसलों को बचाने में मदद करता है, जिससे रासायनिक कीटनाशकों का उपयोग कम होता है। नीम की पत्तियां और अन्य भागों को खेतों में खाद के रूप में इस्तेमाल किया जाता है, जो मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाता है। नीम को जैविक खेती में महत्वपूर्ण माना जाता है, क्योंकि इसके उपयोग से रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों की आवश्यकता कम होती है। रसायन एवं पेट्रो रसायन तथा उर्वरक विभाग के 2008 में जारी नोटिफिकेशन के तहत यूरिया के स्थान पर नीम कोटेड यूरिया का उपयोग करने का जोर दिया गया जिससे भूमि की उर्वरता बनी रहे।

AICRP-26 के अंतर्गत किया गया शोध कार्य

नीम का तेल मुख्य रूप से बीज kernel से प्राप्त होता है। राष्ट्रीय मांग को पूरा करने के लिए उच्च azadiractin और तेल उपज वाले बीज स्रोतों की पहचान कर श्रेष्ठ जर्मप्लाज्म का गुणन करने की दिशा में राष्ट्रीय प्राधिकरण CAMPA, पर्यावरण, वन और

जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा वित्त पोषित अनुसंधान परियोजना AICRP-26 "Genetic Improvement of *Azadirachta indica* A. Juss- (Neem)" के अंतर्गत प्रयास किये गए। विगत तीन वर्षों (2022–24) से राजस्थान (Agroclimatic zone-14) और गुजरात (Agroclimatic zone-13) से 200 पेड़ों का रूपात्मक पैरामीटर (Morphological Parameter) के आधार पर चयन किया गया तथा लगातार तीन वर्षों तक चयनित वृक्षों से हरे-पीले बीजों को एकत्रित किया गया। ताजे एकत्रित किये गये बीजों से गूदा हटाकर छाया में दो दिन तक सुखाकर Azadirachtin (HPLC) और तेल (Soxhlet method) का अध्ययन किया गया।

सर्वप्रथम सूखे नीम बीजों (kernel) को 30 ग्राम वजन करके pastle mortar की सहायता से कूटकर पाउडर को एक साफ सूती कपड़े में बांधकर (बंडल) तैयार किया गया । तैयार सैंपल को apparatus में रखकर और फ्लास्क के अंदर 120 मि.ली. पेट्रोलम ईथर विलयन के साथ वाष्पीकरण इकाई (Condensation Unit) को पाइप से जोड़ा गया ताकि जल का प्रवाह नियंत्रित बना रहे। इस प्रकिया को पूर्ण होने में 4 से 5 घंटे तक का समय लगता है। थिम्बल में प्राप्त होने वाले तेल का प्रारंभिक रंग गहरा हरे से प्रक्रिया के अंत तक हल्का हरा हो जाता है, यह प्रक्रिया के समाप्ति का सूचक होता है। तेल और विलयन के मिश्रण को रोटेटरी वाष्पीकरण मशीन द्वारा पृथक किया जाता है, इस प्रकार शुद्ध नीम का तेल प्राप्त होता है।

चयनित 200 पेड़ों के तीन वर्ष (2022–2024) के आंकड़ों के आधार पर ICFRE-AFRI, Jodhpur के अधीनस्थ दो कृषि जलवायु क्षेत्र (ACZ-13-14) से एकत्रित नीम के फलों की तेल उपज में भिन्नता पाई गई। (टेबल–1)

टेबल–1 कृषि-जलवायु के अनुसार तीन वर्षों का तेल सामग्री (उच्चतम और निम्नतम) डाटा

ACZ	2022		2023		2024	
	Highest	Lowest	Highest	Lowest	Highest	Lowest
13	48.10	21.17	51.82	20.44	48.83	15.57
14	52.17	25.03	50.77	21.50	50.10	17.83

आंकड़ों का विश्लेषण करने पर इस परियोजना में कृषि-जलवायु के अनुसार कुल 10 अधिकतम तेल उपज देने वाले वृक्षों (superior genotypes) को पहचाना गया। (टेबल–2)

पहचाने गए वृक्ष बेहतर बीज स्रोत के रूप में उपयोगी हो सकते है। अधिकतम तेल उपज प्राप्ति वाले वृक्षों से फलों को एकत्रित करके अथवा इनसे उच्च गुणवत्ता वाले पौधे तैयार कर भविष्य में किसान तथा अन्य पणधारी लाभान्वित हो सकते है। उच्च उपज देने वाले जीनोटाइप की पहचान, नीम की उत्पादकता और रासायनिक प्रोफाइल, विशेष रूप से उच्च तेल उपज को अनुकूलित करने के उद्देश्य से, भविष्य में होने वाले अनुसंधान के लिए एक मजबूत आधार के लिए सहयोग करेंगे। ऐसे प्रयास संभवत: नीम के तेल के लिए यूरिया कोटिंग के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए भारत की आवश्यकता को पूरा करने में मदद करेंगे।

Zone ACZ-14		Zone ACZ-13	
Tree No.	Average	Tree No.	Average
20	47.12	87	45.74
10	46.61	56	45.06
6	46.28	34	44.81
88	46.12	54	44.74
25	45.66	88	44.53

टेबल–2 तेल की मात्रा के आधार पर कृषि-जलवायु के अनुसार शीर्ष पांच प्रदर्शनकर्ता

परित्यक्त ओपेन कास्ट खानों का पुनरुद्धार: भूमि क्षरण तटस्थता (Land Degradation Neutrality) की ओर एक कदम

अतहर परवेज[1], मनोरथ सैन[2], सौरव बाग[2]

1-विस्तार प्रभाग, 2-वन संवर्धन एवं वन प्रबंधन प्रभाग

खनन दुनिया की सबसे प्रमुख औद्योगिक गतिविधि है क्योंकि यह ऊर्जा और खनिज का स्रोत है जो अनेक औद्योगिक कार्यों के संचालन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, साथ ही आर्थिक दृष्टि से भी यह काफी महत्वपूर्ण होता है। आर्थिक महत्व के साथ-साथ इसका पर्यावरण पर भी गहरा प्रभाव पड़ता है। ओपेन-कास्ट (Open-cast) खनन का सबसे प्रारंभिक प्रभाव वनों की कटाई और भूमि की क्षरण है एवं खनन संचालन के साथ अन्य पर्यावरणीय प्रभाव जैसे वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, मृदा प्रदूषण आदि उत्पन्न होते हैं। खनन कार्य समाप्त होने के बाद भी इसके दुष्प्रभाव तब तक जारी रहते हैं जब तक पुर्नस्थापन और पर्याप्त वनस्पति आवरण स्थापित नहीं हो जाता है। भारत में सबसे प्रचलित खनन पद्धति ओपेन-कास्ट खनन है, जो भारी मात्रा में अपशिष्ट चट्टानी पदार्थ उत्पन्न करता है, जिन्हें ओवरबर्डन (overburden) कहा जाता जाता है। खनन संचालन के दौरान उत्पन्न अपशिष्ट, विशेषकर ओवरबर्डन पृथ्वी के सबसे बड़े अपशिष्ट धारा में से एक हैं तथा ये डंप (overburden dump) के रूप में खानन पट्टे के अंदर एकत्रित रहते हैं। ऐसा अनुमान है कि आने वाले एक सौ वर्ष में इन अपशिष्टों की मात्रा कम से कम दोगुनी हो जाएगी। ये डंप यांत्रिक रूप से अस्थिर होते हैं। अस्थिर डंप का दुष्परिणाम डंप फेल्योर है जो जान-माल के नुकसान का कारण बनता है तथा खनन संचालन को बाधित करता है। अत: इन डंप का स्थिरीकरण आवश्यक है जिसे विभिन्न भौतिक, रासायनिक एवं जैविक एवं भू-संश्लेषण तकनीकों की सहायता से किया जाता है। यांत्रिक रूप से स्थिर होने के बावजूद ये डंप पर्यावरणीय प्रदूषण की दृष्टि से अत्यंत अस्थिर होते हैं। वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, भारी धातु प्रदूषण और जीवों के प्राकृतिक आवासों का नुकसान ओवरबर्डन डंप के मुख्य दुष्परिणाम हैं। इसके अलावा, यह क्षेत्र की स्थलाकृति (topography) को बदल देता है, प्राकृतिक जल निकासी प्रणाली को प्रभावित करता है तथा स्वाभाविक वन आवरण के विकास को प्रभावित करता है, जिससे मृदा अपरदन और अन्य पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। साथ ही, परित्यक्त खनन क्षेत्र विशेषकर परित्यक्त खनन गड्ढों के उपस्थिति के कारण भी समुदाय के लिए भारी खतरे का कारण हो सकते हैं। ये परित्यक्त खान भूमि, जल एवं वायु प्रदूषण का कारक भी होते हैं।

सेंटर फॉर साइंस एंड एनवायरनमेंट द्वारा जारी प्रेस रिलीज के अनुसार राजस्थान में लगभग 1,324 बड़े खनिज पट्टे, 10,851 लघु खनिज पट्टे एवं 19,251 पत्थर खनन लाइसेंस हैं जो पूरे देश में सबसे अधिक हैं। इनमें से अधिकांश पट्टे और लाइसेंस नियमबद्ध नहीं हैं। सैंडस्टोन खनन के क्षेत्र मुख्यत: जोधपुर, बूंदी, अलवर, भरतपुर, करौली और भीलवाड़ा जिलों में स्थित हैं। जोधपुर में केरू, फेदूसर और मंडोर घाटी क्षेत्रों में बड़ी संख्या में सैंडस्टोन की खानें हैं। इन क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर परित्यक्त खानों की voids (खाई) तथा ओवरबर्डन डंप बने हुए हैं। यह भी उल्लेखनीय है कि ये un-reclaimed voids (जैसा की चित्र 1 में दर्शाया गया है) तथा ओवरबर्डन डंप देश में क्षतिग्रस्त भूमि (degraded lands) के विस्तार को बढ़ा रहे हैं। देश में पहले से ही 97.85 मिलियन हेक्टेयर (Mha) भूमि क्षतिग्रस्त हो चुकी है, जो देश की कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 29.77 प्रतिशत है तथा यह उन क्षेत्रों में रहने वाली जनता की स्थायी कृषि एवं खाद्य सुरक्षा को गंभीर रूप से प्रभावित कर रही है। भूमिक्षरण (land degradation) के प्रभावों की गंभीरता को यह तथ्य दर्शाता है कि भारत ने 2030 तक भूमि पुनर्स्थापन (restoration) के लक्ष्य को 21 Mha से बढ़ाकर 26 Mha कर दिया है (UNCCD-2019)।

अत: भूमि पुनर्स्थापन के इस लक्ष्य को प्राप्त करने एवं भूमि क्षरण तटस्थता (Land Degradation Neutrality) स्थापित करने के क्रम में परित्यक्त ओपेन कास्ट (Open-cast) खानों एवं ओवरबर्डन डंप का रिक्लेमेशन (reclamation) महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते है। परित्यक्त ओपेन कास्ट (Open-cast) खानों के रिक्लेमेशन (reclamation) से पूर्व उन्हें backfill करने की आवश्यकता होती है। पारंपरिक रूप से रेत (river sand) का उपयोग बैकफिलिंग में होता है परन्तु वर्तमान परिपेक्ष्य एवं रेत की सीमित उपलब्धता को देखते हुए वैकल्पिक एवं सस्टेनेबल बैकफिलिंग मैटेरियल्स का चयन शोध का विषय है। किसी भी पदार्थ को बैकफिलिंग मैटेरियल्स की तरह उपयोग करने से पहले उसके जियो-टेक्निकल गुण जैसे स्पेसिफिक ग्रेविटी एवं कॉम्पैक्शन बीहेविअर, हाइड्रोलॉजिकल गुण जैसे पर्मीएबिलिटी तथा लीचिंग बीहेविअर का पता लगाना आवश्यक होता है। उक्त सभी टेस्ट के वांछित परिणाम आने पर ही किसी भी पदार्थ को बैकफिलिंग मैटेरियल की तरह उपयोग किया जा सकता है। फ्लाई ऐश जिसे कोल कॉम्बशन रेजेडु भी कहते हैं कोल पावर्ड थर्मल पॉवर प्लांट्स में काफी अधिक मात्रा में उत्पन्न होता है। उपयोग नहीं होने की दशा में फ्लाई ऐश पॉवर प्लांट्स के अन्दर ही ऐश पौंड में एकत्रित रहता है तथा वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, भू-जल प्रदूषण तथा मृदा प्रदूषण का करक बनता है। शुरुआत में इसका उपयोग भूमिगत खानों के स्टोविंग (stowing) में सीमेंट के साथ मिश्रण बना के होता था परन्तु आजकल इसका उपयोग ओपेन-कास्ट खानों (विशेष कर कोयला खानों) के बैकफिलिंग में भी किया जाने लगा है। परन्तु फ्लाई ऐश से हैवी मेटल लीचिंग एवं भू-जल प्रदुषण की

आशंका के कारण फ्लाई ऐश के बैकफिलिंग में उपयोग अभी सीमित है। वैज्ञानिकों ने फ्लाई ऐश एवं ओवरबर्डन के मिश्रण को बैक फिलिंग हेतु जियो-टेक्निकल एवं पर्यावरणीय दृष्टि से सुरक्षित बताया है। Dutta[1] एवं उनके सहयोगियों ने यह सुझाव दिया है की अम्लीय वातावरण में फ्लाई ऐश के साथ लाइम (lime) की मिश्रित कर बैकफिलिंग करने से हैवी मेटल लीचिग की समस्या नहीं होती है।

इसके अतिरिक विभिन्न प्रकार की औद्योगिक गतिविधियों से विभिन्न प्रकार के non-hazardous ठोस औद्योगिक अपशिष्ट स्टोन डस्ट, स्टोन स्लरी, स्लैग आदि बड़े पैमाने पर उत्पन्न होते हैं। स्टोन स्लरी सैंडस्टोन खनन एवं आयाम निर्धारण (dimensioning) गतिविधियों से भी उत्पन्न होती है। यदि इन अपशिष्ट पदार्थों का उचित तरीके से प्रबंधन नहीं किया जाये तो ये गंभीर पर्यावरणीय एवं मानव स्वास्थ्य संबंधी खतरे पैदा कर सकते हैं। इन non-hazardous ठोस औद्योगिक अपशिष्ट पदार्थों को भी अन्य पदार्थों जैसे फ्लाई ऐश एवं ओवरबर्डन के साथ मिश्रित कर बैकफिलिंग हेतु उपयोग में लाया जा सकता है। यह न केवल सस्टेनेबल बैकफिलिंग मैटेरियल्स है बल्कि इसके उपयोग से landfills का बोझ भी कम होगा तथा औद्योगिक क्षेत्रों में इससे उत्पन्न होने वाले प्रदुषण से भी निजात मिलेगी। यह प्रथा सतत अपशिष्ट प्रबंधन के सिद्धांतों के अनुरूप है एवं अपशिष्ट सामग्रियों का पुनरुपयोग करके सर्कुलर अर्थव्यवस्था (circular economy) को भी प्रोत्साहित करती है।

परन्तु बैकफिलिंग मात्र ही इकोलॉजिकल रेस्टोरेशन हेतु काफी नहीं है। पूर्ण इकोलॉजिकल रेस्टोरेशन गति को तीव्र करने हेतु वनीकरण/पुनर्वनीकरण (afforestation/reforestation) आवश्यक होता है। परन्तु बैकफिल किए गए भूखंडों की पुर्नस्थापना के लिए पारंपरिक पुर्नस्थापना उपाय पर्याप्त नहीं होते, क्योंकि बैकफिल की गई भूमि में मृदा की कमी, पोषक तत्वों की कमी एवं मृदा में सूक्ष्मजीवों का अभाव होता है। शुष्क क्षेत्रों में यह स्थिति और भी जटिल हो जाती है क्योंकि जल उपलब्धता सीमित होती है व तापमान में अत्यधिक परिवर्तन होता है। यह परिस्थितियां प्राथमिक उत्थान (primary succession) जैसी होती हैं, जिसके परिणामस्वरूप वहां वनस्पति की स्थापना में काफी समय लगता है। इन चुनौतियों से निपटने के लिए स्थानीय वनस्पति लगाना एक प्रभावी समाधान है, क्योंकि स्थानीय प्रजातियाँ स्थानीय पर्यावरणीय परिस्थितियों के अनुरूप अनुकूलित होती हैं एवं मृदा की उर्वरता को प्राकृतिक प्रक्रियाओं जैसे नाइट्रोजन फिक्सेशन एवं कार्बनिक पदार्थों के संचय के माध्यम से सुधारती हैं। मृदा संशोधनों का उपयोग जैसे कि कम्पोस्ट या बायोचार का उपयोग करके मृदा की संरचना एवं जल धारणा क्षमता में सुधार किया जा सकता है, जिससे पौधों के विकास के लिए समानुपातिक वातावरण निर्मित होता है। इसके साथ ही पुर्नस्थापना की निरंतर निगरानी (monitoring) से यह सुनिश्चित किया जा सकता है कि पौधों की वृद्धि स्वस्थ तरीके से हो रही है एवं समय अनुसार किसी प्रकार के समायोजन आवश्यकता है या नहीं।

पदम एवं उनके सहयोगियों (2024) ने ''ग्रीन रीक्लेमेशन'' नामक की एक पर्यावरण-हितैषी दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया है जिसका प्रमुख उद्देश्य खनन के बाद भूखंडों की पुर्नस्थापना में मृदा की गुणवत्ता सुधारना, हैबिटैट बहाल करना एवं स्थानीय जैव विविधता की पुन:प्राप्ति सुनिश्चित करना है। इस अध्ययन में प्रजातियों के चयन और कठिन पर्यावरणीय परिस्थितियों जैसी चुनौतियों को स्वीकार किया गया है, लेकिन साथ ही मृदा की उर्वरता एवं इकोसिस्टम पुनर्निर्माण जिनसे व्यवहारिक लाभ जुड़ते हैंउन पर विशेष जोर दिया गया है। अध्ययन यह भी सुझाव देता है कि नैनोमटेरियल्स जैसी उभरती तकनीकें मिट्टी की दीर्घकालिक स्थिरता और पुर्नस्थापना क्षमताओं को बढ़ाने में सहायक हो सकती हैं। इन प्रयासों से खनन उद्योग का पारिस्थितिक पदचिन्ह (ecological foot print) काफी कम हो सकता है।

चित्र-1: फेदुसर (जोधपुर) क्षेत्र में सैंडस्टोन की खनन गतिविधियों के कारण क्षरित (degraded) विशाल भू-भाग (landscape) (Source: Google Earth)

REFERENCES :

- https://www.cseindia.org/cses-report-on-mining-rich-lands-poor-people-released-in-rajasthan-435
- MoEF&CC (2023).National Action Plan to Combat Desertification and Land Degradation Through Forestry Interventions. Ministry of Environment Forest and Climate Change, Government of India. https://moef.gov.in/uploads/ 2023/07/NAP%20final-2023.pdf
- Dutta, B. K., Khanra, S., & Mallick, D. (2009). Leaching of elements from coal fly ash: Assessment of its potential for use in filling abandoned coal mines. Fuel, 88(7), 1314-1323.
- Zine, H., Hakkou, R., Papazoglou, E. G., Elmansour, A., Abrar, F., & Benzaazoua, M. (2024). Revegetation and ecosystem reclamation of post-mined land: toward sustainable mining. International Journal of Environmental Science and Technology, 1-24.

कृषि-वानिकी प्रणालियों में मूल ग्रंथिका की भूमिका: जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण एवं मृदा उर्वरता संवर्धन

विपुला व्यास, कुलदीप शर्मा, तन्मय कुमार भोई, संगीता सिंह

वन संरक्षण प्रभाग

पौधे की जड़ों में राईजोबियम जीवाणु की सहजीविता से निर्मित ग्रंथियाँ

भारत जैसे कृषि-प्रधान देशों में मृदा की उर्वरता बनाए रखना तथा रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता को कम करना एक प्रमुख चुनौती है। कृषि उत्पादकता को बढ़ाने की दिशा में कृषि-वानिकी एक प्रभावशाली प्रणाली सिद्ध हो रही है। कृषि-वानिकी, जिसमें कृषि फसलों के साथ-साथ वृक्षों को एकीकृत रूप से उगाया जाता है, एक स्थायी भूमि प्रबंधन प्रणाली के रूप में उभर रही है। इस प्रणाली में लेग्युमिनस वृक्षों की उपस्थिति विशेष रूप से लाभकारी सिद्ध होती है क्योंकि इनकी जड़ों में पाए जाने वाले मूल ग्रंथिका (root nodule) के माध्यम से वायुमंडलीय नाइट्रोजन का जैविक स्थिरीकरण होता है। यह प्रणाली, जहाँ वृक्षों और फसलों का सह-अस्तित्व होता है, बहुस्तरीय जैविक क्रियाओं के माध्यम से मृदा के भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों को बेहतर बनाती है। लेग्युमिनस (फलीदार) वृक्ष प्रजातियाँ जैसे शीशम, सिरिस, सुबबूल, खेजड़ी, खेर आदि जिनकी जड़ों में मूल ग्रंथिकाऐ विकसित होती हैं जो नाइट्रोजन उपलब्धता के प्राकृतिक स्रोत माने जाते हैं। जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण (Biological Nitrogen Fixation) एक प्राकृतिक प्रक्रिया है, जिसके अंतर्गत विशिष्ट सूक्ष्मजीव वायुमंडलीय नाइट्रोजन को पौधों द्वारा उपयोग योग्य बनाने के लिए अमोनिया में परिवर्तित करते हैं। मूल ग्रंथिका इस प्रक्रिया का प्रमुख स्थल होते हैं।

पौधे की जड़ पर विकसित नोड्यूल (राइजोबियल संक्रमित)

मूल ग्रंथिका की संरचना एवं विकास प्रक्रिया (Structure and Development of Root Nodules)

मूल ग्रंथिका बनने की प्रक्रिया जटिल लेकिन अत्यंत प्रभावशाली होती है। इस प्रक्रिया के मुख्य चरण निम्नलिखित हैं-

- **पहचान और आकर्षण-** पौधे की जड़ें राइजोबियम जीवाणुओं को 'फ्लेवोनोइड्स' नामक रसायन स्रावित करके आकर्षित करती हैं। बदले में, जीवाणु 'नॉड फैक्टर्स' बनाते हैं, जो पौधे को संकेत देते हैं कि वे ग्रंथि बने के लिए तैयार होते है।
- **संक्रमण और प्रवेश-** जड़ के रोम में प्रवेश कर राइजोबियम जीवाणु एक संक्रमण तंतु (Infection Thread) बनाते हैं, जिससे वे जड़ के अंदर प्रवेश करते हैं।
- **मूल ग्रंथिका निर्माण (Nodule Formation)-** संक्रमण तंतु के माध्यम से जीवाणु जड़ के भीतरी भाग में पहुँचते हैं और वहाँ कोशिकाओं के विभाजन से गांठनुमा संरचनाएँ बनती हैं जिन्हें मूल ग्रंथिका कहा जाता है।
- **नाइट्रोजन स्थिरीकरण (Nitrogen Fixation)-** मूल ग्रंथिका के भीतर विशेष एंजाइम नाइट्रोजनेज की सहायता से वायुमंडलीय नाइट्रोजन को अमोनिया में बदला जाता है, जो पौधों द्वारा उपयोग में लिया जाता है।

जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण की प्रक्रिया (Mechanism of Biological Nitrogen Fixation)

मूल ग्रंथिका में स्थित राइजोबियम सूक्ष्मजीव नाइट्रोजिनेज एंजाइम की सहायता से वायुमंडलीय नाइट्रोजन (N_2) को अमोनिया (NH_3) में परिवर्तित करते हैं। यह प्रक्रिया निम्न रासायनिक समीकरण द्वारा व्यक्त की जाती है:-

$$N_2 + 8H+ + 8e- + 16\ ATP \rightarrow 2NH_3 + H_2 + 16\ ADP + 16\ Pi$$

यह एक ऊष्मा-शोषी प्रक्रिया है, जिसमें 16 ATP अणु प्रति N^2 अणु की स्थिरीकरण के लिए आवश्यक होते हैं। उत्पन्न अमोनिया पौधे की कोशिकाओं द्वारा अमीनो अम्लों एवं प्रोटीनों के निर्माण में उपयोग लिया जाता है। यह सहजीव प्रणाली द्विपक्षीय लाभ प्रदान करती है। पौधे को नाइट्रोजन उपलब्ध होता है और सूक्ष्मजीवों को कार्बन स्रोत (जैसे मालेट, सुक्रोज) मिलता है।

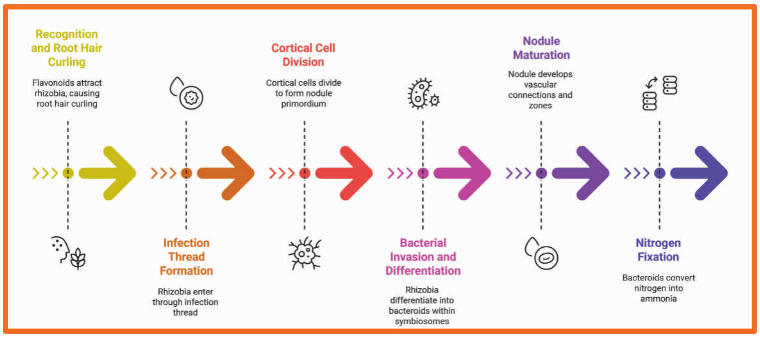

जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण की प्रक्रिया

BNF (Biological Nitrogen Fixation), रासायनिक नाइट्रोजन उर्वरकों की आवश्यकता को कम करके कृषि की पर्यावरणीय स्थिरता में सहायक होता है। इससे ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन भी नियंत्रित किया जा सकता है, जो रासायनिक उर्वरक निर्माण और अत्यधिक उपयोग से उत्पन्न होती हैं। वृक्ष आधारित कृषि-वानिकी प्रणालियों में, यह प्रक्रिया विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है क्योंकि यहाँ पौधों का जीवनकाल लंबा होता है और उनकी गहरी जड़ प्रणाली, BNF प्रक्रिया को अधिक स्थिर और प्रभावशाली बनाती है। शोध से ज्ञात हुआ है कि सुबबूल (*Leucaena leucocephala*) जैसे वृक्ष वार्षिक रूप से प्रति हेक्टेयर 100–200 किग्रा जैविक नाइट्रोजन स्थिर कर सकते हैं।

संवर्धित राइजोबियम जीवाणु की कॉलोनियां

कृषि-वानिकी में मूल ग्रंथिका की उपयोगिता

मूल ग्रंथिका की उपस्थिति मृदा स्वास्थ्य को अनेक प्रकार से सुधारती है:

- ❖ **नाइट्रोजन उपलब्धता–** मूल ग्रंथिका नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करते हैं, जिससे मृदा में नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ती है। इससे मृदा की उर्वरता में वृद्धि होती है और अन्य पौधों को भी लाभ मिलता है।
- ❖ **मृदा की संरचना में सुधार–** जैविक तत्वों की बढ़ती उपस्थिति से मृदा की संरचना अधिक झरझरी और जलधारण क्षमता युक्त बनती है।
- ❖ **माइक्रोबियल विविधता–** मूल ग्रंथिका के आसपास राइजोबियल और अन्य सहायक सूक्ष्मजीवों की संख्या बढ़ती है, जो मृदा में जैव विविधता को बढ़ावा देती है। यह मृदा को रोगों से भी बचाने में सहायक होता है।
- ❖ **फसल चक्र का लाभ–** जब लेग्युमिनस फसलें कटने के बाद मिट्टी में जड़ें छोड़ देती हैं, तो मूलकंदों से नाइट्रोजन धीरे-धीरे मिट्टी में घुलती रहती है। इससे अगली फसलों को प्राकृतिक खाद की तरह लाभ मिलता है।
- ❖ **रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता में कमी–** सामान्यत: 1 हेक्टेयर भूमि पर मूल ग्रंथिका युक्त लेग्युमिनस वृक्षों की उपस्थिति 50–100 किग्रा/हेक्टेयर तक जैविक नाइट्रोजन पूरक कर सकती है। इससे न केवल उर्वरक लागत में कमी आती है, बल्कि रासायनिक उर्वरकों के दुष्प्रभावों से भी बचाव होता है।

व्यवहारिक दृष्टिकोण एवं किसान हित (Practical Implications for Farmers)

मूल ग्रंथिका युक्त वृक्ष प्रजातियाँ किसानों को बहुआयामी लाभ प्रदान करती हैं। ये न केवल जैविक उर्वरक के रूप में कार्य करते हैं, बल्कि इनके माध्यम से लकड़ी, चारा, ईंधन और अन्य वानिकी उत्पादों से अतिरिक्त आय अर्जित की जा सकती है। सुबबूल जैसे वृक्षों की चारे के रूप में उच्च पोषण क्षमता, शीशम की लकड़ी की मांग, तथा सिरिस की छाया और पर्यावरणीय सेवा इन्हें कृषि-वानिकी के लिए उपयुक्त बनाती है। कृषकों को राइजोबियम को पाउडर या तरल के माध्यम से बीजोपचार अथवा पौधोपचार करने की सलाह दी जाती है, जिससे मूल ग्रंथिका की संख्या एवं क्रियाशीलता में वृद्धि होती है। शोध से यह सिद्ध हुआ है कि राइजोबियम कल्चर से उपचारित पौधों में मूल ग्रंथिका संख्या, जैविक नाइट्रोजन स्तर एवं कुल बायोमास में 20–40 प्रतिशत तक की वृद्धि हो सकती है।

निष्कर्ष

मूल ग्रंथिका आधारित जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण प्रणाली कृषि-वानिकी में मृदा उर्वरता, पोषक तत्त्व पुनर्चक्रण एवं कृषि लागत में कमी के माध्यम से स्थायी कृषि की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करती है। लेग्युमिनस वृक्षों का उपयुक्त चयन, वैज्ञानिक राइजोबियम कल्चर का प्रयोग एवं फसल चक्र में उनका समावेश किसानों के लिए दीर्घकालिक लाभ का मार्ग प्रशस्त करता है। इस प्रकार, मूल ग्रंथिका एक अत्यंत प्रभावशाली जैव संसाधन हैं, जिसका व्यावहारिक उपयोग कृषि एवं वानिकी ले समावेशी रूप कृषि-वानिकी को वैज्ञानिक रूप से समृद्ध बनाता है।

कैपेरिस डेसिडुआ (केर) थार के रेगिस्तान का अमूल्य उपहार

इलहाम बानो, सचिन शर्मा एवं पवन कुमार परिहार

वन पारिस्थितिकी एवं जलवायु परिवर्तन प्रभाग

परिचय

केर (*Capparis decidua*) – रेगिस्तान का चंदन

केर, जिसे स्थानीय भाषाओं में करेर, करिल, कारेस या करु जैसे नामों से जाना जाता है, कैपरेसी (Capparaceae) कुल का एक महत्वपूर्ण बहुउद्देशीय पौधा है। यह मुख्यत: भारत के शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में पाया जाता है और अपने औषधीय, पोषणात्मक एवं पारिस्थितिकीय गुणों के कारण 'रेगिस्तान का चंदन' कहलाता है।

यह पौधा भारत के अलावा अफ्रीका और सऊदी अरब जैसे देशों के गर्म और शुष्क इलाकों में भी पाया जाता है। भारत में केर विशेष रूप से राजस्थान, उत्तर प्रदेश, गुजरात, हरियाणा, दिल्ली, पंजाब और पश्चिमी महाराष्ट्र में पाया जाता है। विभिन्न राज्यों में इसे अलग-अलग नामों से जाना जाता है। राजस्थान में 'केर', उत्तर प्रदेश में 'करिल', गुजरात में 'केर', हरियाणा में 'टीन्ट', दिल्ली और पंजाब में 'डेला', जबकि महाराष्ट्र में 'नेप्टी' कहा जाता है।

केर का प्राकृतिक वास मुख्यत: शुष्क पेडिमेंट मैदान होते हैं। यह एक अत्यंत सहनशील और कठोर पौधा है जो रेतीली, उथली, लवणीय मिट्टी तथा स्थिर रेत के टीलों में भी आसानी से उगता है। इसकी विशेषता यह है कि यह उन स्थानों पर भी जीवित रह सकता है जहाँ अन्य पौधे उगना संभव नहीं होता। दीर्घकालिक सूखे की परिस्थितियों को सहन करने की इसकी क्षमता इसे शुष्क क्षेत्रों के लिए अत्यंत उपयुक्त बनाती है।

यह पौधा आमतौर पर पहाड़ी ढलानों, बंजर भूमि, और खुले शुष्क क्षेत्रों में उगता है। पारिस्थितिक दृष्टि से यह अनेक अन्य शुष्क क्षेत्रीय प्रजातियों जैसे धोक (*Anogeissus pendula*), आक (*Calotropis procera*), कांकेड़ (*Maytenus emarginata*), झाड़ी बेर (*Zizyphus nummularia*), मीठा जाल (*Salvadora oleoides*) और खेजड़ी (*Prosopis cineraria*) के साथ सह-अस्तित्व में पनपता है। केर न केवल वनस्पति आच्छादन प्रदान करता है, बल्कि स्थानीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था, पशुपालन और पर्यावरण संरक्षण में भी अहम भूमिका निभाता है।

पारिस्थितिकी गुण: पर्यावरणीय दृष्टि से भी केर अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसकी गहरी जड़ें और फैलावदार संरचना रेत के टीलों को स्थिर करने, मृदा क्षरण को रोकने और कठोर जलवायु में हरियाली बनाए रखने में सहायक होती हैं। यही कारण है कि इसे थार रेगिस्तान में आश्रय पट्टी (shelter belt) स्थापित करने के लिए सबसे उपयुक्त प्रजातियों में माना जाता है। यह वनीकरण, पुन:वनीकरण और लैंडस्केप गार्डनिंग के लिए भी उपयोगी है।

इस तरह, केर केवल एक पौधा नहीं, बल्कि रेगिस्तानी जीवनशैली का मजबूत सहारा है, जो पोषण, आय, पर्यावरण और आजीविका से जुड़ा एक समग्र समाधान प्रस्तुत करता है।

जलवायु

केर 300-1,200 मीटर की ऊँचाई पर पाया जाता है, जहाँ वार्षिक वर्षा 100-750 मिमी और औसत तापमान 25-48 डिग्री सेल्सियस के बीच होता है।

मृदा

यह क्षारीय, रेतीली और कंकरीली मिट्टी को पसंद करता है। यह खारी सोडिक मिट्टियों पर भी अच्छी तरह से उगता है। केर उथली कठोर मिट्टी और चट्टानी जगहों पर भी अच्छी तरह से बढ़ता है, लेकिन बदलते रेत के टीलों या जल-जमाव वाले क्षेत्रों में नहीं उगता है।

आकारिकी- केर का स्वरूप और उसका वार्षिक जीवनचक्र

केर एक घनी शाखाओं वाला झाड़ी नुमा या छोटा पेड़ होता है, जो लगभग 4 से 7 मीटर तक ऊँचा हो सकता है। इसकी हरी पतली टहनियाँ और गोल आकार की घनी छतरी (मुकुट) इसे विशेष पहचान देती हैं। इसका तना युवा अवस्था में हरा और चिकना होता है, लेकिन जैसे-जैसे पेड़ परिपक्व होता है, इसकी छाल सलेटी रंग की हो जाती है।

इसकी पत्तियाँ छोटी, रसीली और पतझड़ वाली होती हैं, जो नई टहनियों पर केवल एक महीने तक ही दिखाई देती हैं। इसकी शाखाओं पर लगभग 5 मिमी लंबे छोटे-छोटे कांटे पाए जाते हैं।

केर के फूल टहनियों के सिरों और किनारों पर उगते हैं और ये गुलाबी, गहरे लाल या पीले रंग के सुंदर समूहों में खिलते हैं। इसके फल गोल होते हैं और लंबी डंडी पर लगे होते हैं। जब ये कच्चे होते हैं, तो हरे रंग के होते हैं, और पकने पर गुलाबी या लाल रंग के हो जाते हैं। पके हुए फलों का गूदा मीठा और पीले रंग का होता है, जिसमें कई बीज होते हैं।

फूल आमतौर पर साल की नई टहनियों पर आते हैं। केर में नई बढ़वार मानसून के बाद, यानी अक्टूबर की शुरुआत में शुरू होती है और अगले वर्ष जून के अंत तक चलती है। मुख्य रूप से फूल वसंत ऋतु (फरवरी-मार्च) में आते हैं, और फल मार्च-अप्रैल के दौरान लगते हैं।

केर एक ऐसा पौधा है जिसमे साल में तीन बार फूल लगते हैं। इसे स्थानीय भाषा में अम्बे बहार (फरवरी-मार्च), मृग बहार (जुलाई-अगस्त) और हस्त बहार (अक्टूबर-नवंबर) कहा जाता है।

यह विशेषता इसे रेगिस्तानी पारिस्थितिकी तंत्र में और भी महत्वपूर्ण बनाती है।

केर की उपयोगिता

राजस्थान के शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में केर न केवल एक पौधा है, बल्कि ग्रामीण जीवन की आत्मा का हिस्सा है। यह पौधा ग्रामीण अर्थव्यवस्था में खाद्य, चारा, ईंधन, औषधि और आय के स्रोत के रूप में कई तरह से योगदान देता है-

खाद्य एवं चारा: इसके कच्चे हरे फल और कलियाँ अचार बनाने के लिए इस्तेमाल की जाती हैं और पकाकर सब्जी के रूप में खाई जाती हैं। मार्च से अप्रैल के महीनों में ग्रामीण महिलाएं इन फलों को प्राकृतिक स्थानों से एकत्र करती हैं, जो उनके लिए अतिरिक्त आय का एक साधन बनता है। इसकी कोमल हरी शाखाएँ ऊँट और बकरियों के लिए अच्छा चारा बनती हैं, खासकर सर्दियों के बाद जब अन्य चारागाह सीमित होते हैं।

केर का फील्ड परिदृश्य, फूल एवं फल

ईंधन: केर की लकड़ी ईंधन के रूप में इस्तेमाल होती है और इसकी दीमक-प्रतिरोधी लकड़ी का प्रयोग ग्रामीण लोग औजारों के हैंडल, गाड़ियों के पहियों और अन्य घरेलू उपयोगी वस्तुओं के निर्माण में करते हैं।

औषधि: इसके अतिरिक्त, केर के पौधे का इस्तेमाल कई रोगों, विशेषकर हृदय और पेट संबंधी बीमारियों में पारंपरिक औषधि के रूप में किया जाता है।

जैव-बाड़: यह पौधा जैव-बाड़ (बायो-फेंस) के रूप में भी लगाया जाता है, क्योंकि यह न केवल बाड़ का कार्य करता है, बल्कि उपयोगी फल भी प्रदान करता है।

कैपेरिस डेसिडुआ पौधरोपण के लिए नर्सरी तकनीक

कैपेरिस डेसिडुआ मुख्य रूप से बीज और जड़ों से उत्पन्न होती है। शुष्क क्षेत्रों में इस प्रजाति के पौधरोपण की तकनीक अभी तक विकसित नहीं की गई है। रेगिस्तानी परिस्थितियों में लगाए गए पौधों की जीवित रहने की दर बहुत कम होती है। इसलिए, पौधों को लगाने और कम होते जर्मप्लाज्म को संरक्षित करने के लिए क्षेत्रीय परिस्थितियों में केर की स्थापना हेतु तकनीक विकसित करने की तत्काल आवश्यकता है। नर्सरी में उगाए गए पौधों में एक अच्छी तरह से विकसित जड़ और लंबी मूसला मूल खेत में केर के पौधों की उत्तरजीविता में सुधार करने में मदद करती है। इसके लिए नर्सरी में विभिन्न आकार के रूट ट्रेनरों का उपयोग किया जा सकता है ताकि स्वस्थ और लंबी मूसला मूल प्रणाली विकसित की जा सके।

बीज संग्रहण-

केर के पके हुए लाल रंग के फल (बेरी) मई-जून के मौसम में एकत्र किए जाते हैं। एक पके हुए फल में लगभग 4-10 बीज होते हैं। बीजों को फल के मुलायम गूदे से सावधानीपूर्वक पानी से धोकर अलग किया जाना चाहिए और फिर कंटेनरों में संग्रहण से पहले सुखा लेना चाहिए। क्षतिग्रस्त बीजों को सावधानीपूर्वक निकाल देना चाहिए। सही ढंग से संग्रहित किए गए ये बीज एक साल तक इस्तेमाल किए जा सकते हैं। चूंकि ये बीज स्वाभाविक रूप से जल्दी खराब हो जाते हैं, इसलिए ताजे एकत्र किए गए बीजों का उपयोग बीजारोपण के लिए अनुशंसित है क्योंकि समय के साथ बीजों की जीवंतता (अंकुरण क्षमता) कम हो जाती है।

बीज पूर्व उपचार-

बीजों को बुवाई से पूर्व 12-24 घंटों के लिए पानी में भिगोकर रखना चाहिए एवं बीज बुवाई के लिए काम लिए जाने वाले कंटेनर में सीधे ही बीजारोपण करना चाहिए।

बीज बुआई-

केर के पौध तैयार करने के लिए बीज बुआई एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। इसके लिए मिट्टी, रेत और नीम की सड़ी पत्तियों की खाद को 6:3:1 के अनुपात में मिलाकर एक उपजाऊ और हल्की मिश्रण तैयार करना चाहिए। यह मिश्रण बीज अंकुरण के लिए उपयुक्त माध्यम प्रदान करता है।

बीज बोने का सही समय अगस्त से सितंबर का महीना माना जाता है। बीजों को नर्सरी बेड में या सीधे कंटेनरों में बोया जा सकता है। कंटेनर के रूप में 20x25 सेमी के पॉलीबैग, 300 सीसी या 500 सीसी के रूट ट्रेनर्स, या एक्सटेंडर युक्त रूट ट्रेनर्स का उपयोग किया जा सकता है। पौधे की लंबी मुसला मूल प्रणाली को प्रत्यारोपण के झटके से बचाने के लिए बीजों को सीधे कंटेनरों में ही बोया जाना चाहिए। बीजों को छायादार स्थान पर बोना चाहिए, जहाँ जलनिकासी की अच्छी व्यवस्था हो और बोने का माध्यम कीटाणुरहित हो। अंकुरण की अवधि के दौरान मिट्टी में पर्याप्त नमी बनी रहनी चाहिए, लेकिन पानी इतना न हो कि मिट्टी गीली हो जाए या जल जमाव हो।

बीज अंकुरण और पौधों की देखभाल-

इस पौधे के लिए अंकुरण अवधि बीज बोने के 7-15 दिनों के भीतर होती है। अंकुरण के बाद औसत अंकुरण लगभग 57 प्रतिशत होता है। आम तौर पर, अंकुरण के बाद, पौधों का विकास और जीवित रहना बहुत मुश्किल होता है, नर्सरी में 9 महीने के पौधों में केवल 18-20 प्रतिशत जीवित रहते हैं। फंगल रोगाणुओं और दीमक के हमले से पौधों को बचाने के लिए नीम के तेल का उपचार किया जाना चाहिए, क्योंकि यह दीमक-रोधी गुणों से भरा होता है। नर्सरी में अंकुरित पौधों को बीज अंकुरण के बाद कम से कम 9-12 महीने तक रखा जाना चाहिए। गर्मी में हर दूसरे दिन और सर्दियों में 3-5 दिनों के अंतराल पर पानी देने का कार्यक्रम अपनाना चाहिए। पौधा अधिक पानी देने के प्रति बहुत संवेदनशील होता है और इसकी जड़ कॉलर सड़ने के कारण मर सकती है। यह विधि अपनाकर सफलतापूर्वक केर के मजबूत और स्वस्थ पौधे तैयार किये जा सकते है, जो आगे चलकर रेगिस्तानी क्षेत्रों में हरियाली बढ़ाने और आजीविका का साधन बनने में सहायक होंगे।

खेत में रोपण और देखभाल-

कैपरिस डेसिडुआ का खेत में रोपण अगस्त-सितंबर में पहली बारिश के बाद किया जा सकता है। साइट की तैयारी का कार्य आमतौर पर जून में किया जाना चाहिए, जब मानसून का आगमन होने वाला हो।

खुदाई- गड्ढे 30X30X30 सेमी के आकार में खोदना चाहिए । गड्ढों के बीच 3-5 मीटर की दूरी रखनी चाहिए।

उर्वरक- गड्ढों में मिट्टी के साथ पुराने प्राकृतिक पौधों की जड़ क्षेत्र से संग्रहित मिट्टी और जैव उर्वरक मिलाना चाहिए।

सिंचाई- नए लगाए गए पौधों को पर्याप्त नमी की आवश्यकता होती है। गर्मियों में हर हफ्ते सात दिन के अंतराल पर और सर्दियों में 15 दिन के अंतराल पर पानी देना चाहिए।

स्थापना- एक बार स्थापित होने के बाद, पौधों को रोपण के 2 साल बाद और अधिक देखभाल की आवश्यकता नहीं होती।

फूल और फल उत्पादन- जब *कैपरिस डेसिडुआ* पौधे कायिक रूप से प्रचारित होते हैं, तो ये लगभग 4-5 वर्ष की आयु में फूल और फल देना शुरू कर देते हैं। वहीं, बीज से उगाए गए पौधे 7-8 वर्ष की आयु में फल पैदा करने में सक्षम होते हैं।

निष्कर्ष-

कैपरिस डेसिडुआ के सफल खेत में रोपण के लिए सही समय, तैयारी और देखभाल आवश्यक है। एक बार जब पौधे स्थापित हो जाते हैं, तो वे विशेष रूप से कम देखभाल के साथ अच्छी तरह से विकसित होते हैं, जिससे ये क्षेत्र के शुष्क वातावरण में जीवनदायिनी भूमिका निभा सकते हैं।

सेनेगालिया सेनेगल- भारतीय शुष्क क्षेत्र में पारिस्थितिक और आर्थिक स्थिरता सुनिश्चित करने हेतु एक महत्वपूर्ण वानिकी प्रजाति

अंजलि जोशी एवं पूजा शर्मा

आनुवांशिकी एवं वृक्ष सुधार प्रभाग

भारतीय शुष्क क्षेत्र में पानी की उपलब्धता

भारतीय शुष्क क्षेत्र 31.7 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल में फैला हुआ है। यह कुल भौगोलिक क्षेत्र का 12 प्रतिशत है और इसमें राजस्थान, गुजरात, पंजाब, हरियाणा, महाराष्ट्र, कर्नाटक और आंध्र प्रदेश राज्य शामिल हैं। भूजल स्तर और वर्षा कम होने और पानी का अपवाह अधिक होने के कारण इन सभी क्षेत्रों में पानी की काफी कमी है। इन क्षेत्रों में वार्षिक वर्षा 100 से 800 मिमी के बीच दर्ज की जाती है। काफी कम वर्षा होने के कारण उत्तरी शुष्क क्षेत्र जिसमें बड़े पैमाने पर राजस्थान का रेगिस्तान, कच्छ का रण और पंजाब और गुजरात के अर्ध-शुष्क क्षेत्र शामिल हैं, पूरी तरह से भूजल और जमीन के ऊपर बने टैंकों, तालाबों और पानी के अन्य पारंपरिक भंडारों पर निर्भर है। इन क्षेत्रों से कोई नदियाँ नहीं बहतीं, हालाँकि, दक्षिणी प्रायद्वीप को प्रायद्वीपीय नदियों से पानी मिलता है। भूजल निर्वहन और मानसून की बारिश इस क्षेत्र में पानी के मुख्या स्रोत हैं।

भारतीय शुष्क क्षेत्र में आजीविका के अवसर

शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में वहां रहने वाले कई लोगों के लिए अपर्याप्त खाद्य सुरक्षा और आर्थिक अवसर की कमी के कारण गंभीर चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। भूमि की कम उत्पादकता और लघु भूमि क्षेत्र के कारण इन क्षेत्रों में बेरोजगारी बड़ी है। वर्तमान कृषि पद्धतियों का अनुसरण करने वाले कई शुष्क भूमि किसान साल भर की आजीविका कमाने में असमर्थ हैं। चरवाहों या बकरी पशुपालकों के लिए पानी और चारे की कमी व जानवरों में बीमारी आदि कुछ प्रमुख समस्याएं हैं। चरागाहों की कमी होने के कारण जानवरों का भरण पोषण मुख्यत: क्षेत्र की चारे के लिए उपयोग की जाने वाली देशी वृक्ष प्रजातियाँ पर निर्भर करता है, जिस वजह से पहले से ही दुर्लभ वन क्षेत्रों पर और दबाव पैदा होता है। इसलिए ग्रामीण अक्सर अपने जीवनयापन के लिए वर्षा आधारित कृषि, पशुधन पालन और अन्य आय पैदा करने वाली गतिविधियों के संयोजन पर निर्भर रहते हैं। शुष्क मौसम और कम वर्षा वाले इन क्षेत्रों में, प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाली वृक्ष प्रजातियां कृषि वानिकी में मूल्यवान योगदान देती हैं, और यह कम कृषि लागत एवं अपने सामाजिक-आर्थिक लाभों के कारण फसल प्रजातियों के विकल्प के रूप में भी उपयोग की जा सकती हैं। शुष्क क्षेत्र के पेड़ किसानों को आजीविका प्रदान करते हैं और भोजन, चारा, लकड़ी, ईंधन और अन्य गैर-लकड़ी वन उत्पादों के स्रोत के रूप में उपयोग किये जाते हैं।

रेजिन और गोंद वृक्षों से अर्जित गैर-लकड़ी वन उत्पादों में प्रमुख स्थान रखते हैं और भोजन, चारे और दवा के अलावा ये शायद सबसे अधिक व्यापक रूप से इस्तेमाल और कारोबार किए जाने वाले गैर-लकड़ी वन उत्पाद हैं। शुष्क क्षेत्र में बड़ी संख्या में ऐसी वृक्ष प्रजातियां हैं जिनसे गोंद और रेजिन निकलता है। वृक्षों से प्राप्त गोंद और रेजिन का उपयोग या तो घरेलू खपत के लिए किया जाता है या बाजार में बेचा जाता है, जिससे स्थानीय समुदायों को आर्थिक लाभ मिलता है। शुष्क क्षेत्र के जंगलों से एकत्रित किए गए व्यावसायिक महत्व के गोंद और गोंद-रेजिन में कराया गोंद, घट्टी गोंद, सलाई गोंद, गुग्गुल और अरबी गोंद शामिल हैं। अरबी गोंद का उत्पादन विभिन्न प्रजातियों से किया जाता है, जिसमें भारतीय अरबी गोंद अकेशिया निलोटिका और अरबी गोंद सेनेगालिया सेनेगल शामिल है।

सेनेगालिया सेनेगल -भारतीय शुष्क क्षेत्र की आर्थिक और पारिस्थितिक रूप से महत्वपूर्ण वृक्ष प्रजाति

सेनेगालिया सेनेगल

सेनेगालिया सेनेगल मूलत: अफ्रीका के शुष्क और अर्धशुष्क क्षेत्र में पाई जाने वाली वृक्ष प्रजाति है इसे पूर्व में अकेशिया सेनेगल कहा जाता था। यह महत्वपूर्ण प्रजाति राजस्थान के रेगिस्तानी क्षेत्र विशेषकर शुष्क पश्चिमी राजस्थान में चट्टानी पहाड़ियों, रेतीले मैदानों, और रेत के टीले में प्रमुखता से उगती है और पारंपरिक कृषि वानिकी प्रणाली का महत्वपूर्ण घटक हैं। *सेनेगालिया सेनेगल* के परिपक्व वृक्ष की लम्बाई आमतौर पर 4.7 से 8.1 मीटर व व्यास 29-37 सेमी होता है। छाल भूरी-सफेद होती है, हालाँकि कुछ परिपक्व पुराने पेड़ों में यह गहरे रंग की, पपड़ीदार और पतली हो सकती है। इसकी शखाएँ कांटेदार होती हैं। पत्तियों में 10 से 13 प्रतिशत सुपाच्य प्रोटीन और 0.12 से 0.15 प्रतिशत फास्फोरस होता है। फूल पीले, सफेद और सुगंधित होते हैं। फर्टीलाईजेशन के उपरांत इनमें फलियां बनती हैं जिनमे 3-6 बीज पाए जाते हैं। इसकी फली में 15 प्रतिशत सुपाच्य प्रोटीन और 0.12 से 0.14 प्रतिशत फास्फोरस होता है एवं इसके बीजों को स्थानिय लोगों द्वारा सब्जी के रूप में खाया जाता है। अत: शुष्क क्षेत्रों में यह मानव पोषण का एक महत्वपूर्ण स्रोत भी है। साथ ही इसकी पतियों और फलियों को भेड़, बकरियों, ऊँट, आदि के चारे के लिए भी प्रयोग में लाया जाता है। एक लेगुमिनस प्रजाति होने के कारण यह वायुमंडलीय नाइट्रोजन को स्थिर करती है और मिट्टी की उर्वरता में सुधार करती है। साथ ही यह रेत के टीलों के स्थिरीकरण के द्वारा मरुस्थलीकरण नियंत्रण के लिए महत्वपूर्ण है। इसका उपयोग हवा के वेग को कम करने और भू-क्षरण रोकने के लिए भी किया जाता है।

अरबी गोंद, *सेनेगालिया सेनेगल* के तनों और शाखाओं से प्राप्त होने वाला पदार्थ है। अरबी गोंद का स्राव वृक्ष की भीतरी छाल की नलिका से होता है। किसी भी तनावग्रस्त स्थिति जैसे गर्मी, सूखा, घाव और बीमारियों की उपस्थिति में पेड़ की छाल की दरारों से गोंद निकलता है। छाल से प्राकृतिक रूप से निकलने वाला गोंद गाड़ा व तरल होता है और बाहरी वातावरण के संपर्क में आने के उपरांत यह सूख कर ठोस हो जाता है। एक युवा पेड़ आमतौर पर सालाना 400-700 ग्राम गोंद उपज देता है। यह व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण उत्पाद है जिसका उपयोग खाद्य उद्योग, डेयरी उत्पाद, बेकरी उत्पाद, स्वाद बढ़ाने वाले पदार्थ, पेय पदार्थ और दवा उद्योग में किया जाता है। सौंदर्य प्रसाधन से लेकर वस्त्र तक इसके कई अन्य अनुप्रयोग हैं। भारत में शुद्ध अरबी गोंद की बाजार लागत 1200-1500 रुपये प्रति किलोग्राम है जिससे ग्रामीण परिवारों को अतिरिक्त आय मिलती है, और फसल उत्पादन कम या विफल होने की स्थिति में यह आय का एक निश्चित स्रोत सिद्ध होता है। भारत, अरबी गोंद का आयातक रहा है। देश की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सूडान और नाइजीरिया से लगभग 26,098 टन तक अरबी गोंद का आयात किया जाता है।

भारत के भौगोलिक क्षेत्र का लगभग 40 प्रतिशत हिस्सा शुष्क और अर्ध-शुष्क उष्णकटिबंधीय क्षेत्र है जो *सेनेगालिया सेनेगल* के पेड़ों के वृद्धि और विकास के लिए अनुकूल है। सेनेगालिया सेनेगल के पेड़ों के वृद्धि और विकास के लिए भारतीय शुष्क क्षेत्र की उपयुक्तता, उत्सर्जित गोंद की भारतीय बाजार में उच्च मांग, शुष्क क्षेत्र के निवासियों के लिए आय के वैकल्पिक स्रोत के रूप में इसकी उपयोगिता, भोजन एवं चारे के साधन के रूप में इसकी उपयोगिता, नाजुक रेगिस्तानी पारिस्थितिकी तंत्र की आर्थिक और पारिस्थितिक स्थिरता को बनाये रखने में इस प्रजाति के अहम् योगदान को ध्यान में रखते हुए इन क्षेत्रों में इसके रोपण को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

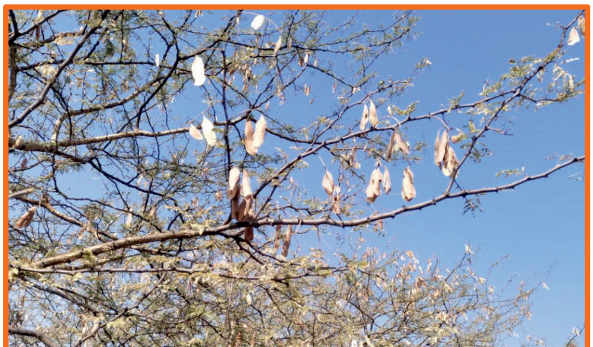

सेनेगालिया सेनेगल की पत्तियाँ, तना एवं फलियाँ

विथानिया कोगुलांस (*Withania coagulans*) एवं इसके औषधीय महत्व

सौरव बाग[1], अतहर परवेज[2] एवं मनोरथ सेन[1]

1-वन संवर्धन एवं वन प्रबंधन प्रभाग, 2-विस्तार प्रभाग

औषधीय पौधों का उपयोग प्राचीन काल से विभिन्न स्वास्थ्य संबंधित समस्याओं के उपचार के लिए किया जाता रहा है। आयुर्वेदिक चिकित्सा का विशेष महत्व है क्योंकि इसके दुष्प्रभाव कम पाए जाते हैं एवं इसके कई लाभ हैं। *विथानिया कोगुलांस* (*Withania coagulans* Dunal) को आयुर्वेद एवं यूनानी चिकित्सा पद्धतियों में इसके व्यापक उपचारात्मक प्रभावों के लिए महत्वपूर्ण माना जाता है। यह औषधीय पौधा झाड़ी (Shrub) है जो भारत के शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्रों की स्वदेशी प्रजाति है। *विथानिया कोगुलांस* को हिंदी में पुनीर, पुनीर बंध, अकरी, बिनपुतकाह, पनीर डोडाय संस्कृत में ऋष्यगंधा, अंग्रेजी में इंडियन चीजमेकर, इंडियन आर्गेनिक कंपाउंड, वेजिटेबल आर्गेनिक कंपाउंड के नाम से जाना जाता हैं। इसके अतिरिक्त यह पूर्वी भूमध्यसागरीय क्षेत्र में भी पाया जाता है, जो उत्तरी अफ्रीका से दक्षिण पश्चिम एशिया तक फैला हुआ है। भारत में यह मुख्य रूप से हिमाचल प्रदेश, पंजाब, उत्तराखंड एवं राजस्थान के उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रों में पाया जाता है जिनमे बाड़मेर, जैसलमेर एवं जोधपुर प्रमुख हैं। यह पश्चिमी राजस्थान के रेगिस्तानी क्षेत्र में विरल रूप से वितरित है। इसकी सीमित उपस्थिति तथा अतिदोहन इसकी प्रमुख चुनौतियाँ हैं तथा यह IUCN Red Listed अंतर्गत्त संकटग्रस्त प्रजाति की श्रेणी में आता है। इसके बेरी जैसे फल में प्रोटियोलिटिक एंजाइम (vegetable rennet) तथा विथानोलाइड्स (withanolides) पाए जाते हैं, जिनमें सूजनरोधी, मधुमेहरोधी, रोगाणुरोधी गुण होते हैं। इसके अतिरिक्त विथानिया कोगुलांस के फल दूध को जमाने की क्षमता के लिये भी प्रसिद्ध हैं।

औषधीय महत्व

विथानिया कोगुलांस एक कीमती औषधीय पौधा है जिसका भारत में 3,000 वर्षों से अधिक समय से उपयोग हो रहा है। कई अध्ययन बताते हैं कि *विथानिया कोगुलांस* के विभिन्न भागों और उनके सक्रिय घटकों में अनेक औषधीय व चिकित्सीय गुण विद्यमान हैं, और इन्हें कई बीमारियों के खिलाफ नई औषधि व चिकित्सा के रूप में माना जा सकता है। इसका उपयोग असामान्य कोशिका विकास (abnormal cell growth), लुप्तता संबंधी विकारों (wasting disorders), तंत्रिका (neural ailments), मधुमेह, अनिद्रा, तीव्र तथा दीर्घकालिक यकृत रोगों के उपचार में किया जाता है। "Withanolides" नामक सक्रिय यौगिकों की उपस्थिति के कारण *विथानिया कोगुलांस* में निम्न वर्णित अन्य औषधीय गुण भी हैं-मूत्रवर्धक, सूजन-विरोधी, जीवाणुनाशक, कवकरोधी, हृदयरक्षण, मुक्त-कण प्रतिकार (Free radical scavenging), तंत्रिका तंत्र को शांत करने वाला, प्रतिरक्षा-संतुलन (Immunomodulation), यकृत-रक्षण (Hepato protective), रुधिर-शर्करा निम्न करने वाला (Hypoglycemic), रोगाणुरोधी (Antimicrobial), प्रतिकार-कैंसर (Antitumor) ऑक्सिडेशन रोधी (Anti Oxidative), उत्परिवर्तन-रोधी (Anti mutagenic)। इसके साथ ही यह Macro nutrients: कैल्शियम, मैग्नीशियम, पोटैशियम, सोडियम तथा Micro nutrients: लोहा, तांबा, जस्ता, निकेल पोषक तत्वों का अच्छा स्रोत भी है। इस पौधे के विभिन्न भाग पत्तियाँ, जड़, बीज और फलपरंपरागत रूप से उनके औषधीय गुणों के लिए उपयोग किये जाते हैं जिनके संक्षिप्त विवरण टेबल-1 में दर्शाया गया है।

टेबल-1: *विथानिया कोगुलांस* के खनिज घटक

मैक्रो मिनरल्स (Macro-Minerals)	मात्रा mg/kg
कैल्शियम	9260
मैग्नीशियम	35,280
पोटैशियम	2450
सोडियम	125
माइक्रो मिनरल्स (Micro-Minerals)	**मात्रा mg/kg**
आयरन	98.8
कॉपर	2.2
जिंक	40.2
क्रोमियम	0.6
कैडमियम	1.4
लीड	1.9
निकेल	1.8

पत्तियाँ: प्राचीन चिकित्सा में *विथानिया कोगुलांस* की पत्तियों का उपयोग मुख्यत:सूजन-रोधी और दर्द निवारक गुणों के लिए किया जाता रहा है। इन्हें अक्सर बाह्य उपयोग कर दर्द में राहत, सूजन में कमी और घावों के ठीक होने में मदद के लिए उपयोग किया जाता है। त्वचा रोगों और हड्डियों के जोड़ संबंधित समस्याओं में

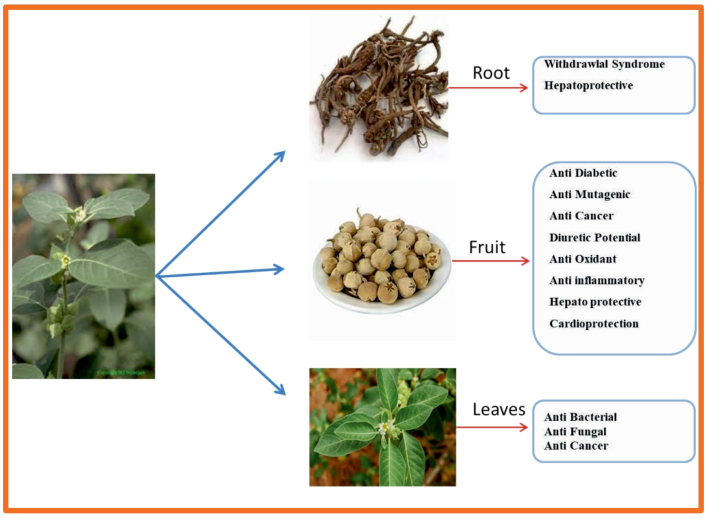

विथानिया कोगुलांस के विभिन्न भागों के औषधीय गुण

पेस्ट या लेप के रूप में भी लगाया जाता है।

जड़: आयुर्वेद जैसी पारंपरिक चिकित्सा प्रणालियों *विथानिया कोगुलांस* की जड़ों को अत्यधिक महत्व प्राप्त है। इसके तनाव-अनुकूलन (adaptogenic) गुण शरीर को मानसिक और शारीरिक तनाव से संघर्ष करने में सहायता करते हैं। जड़ के अर्क से प्रतिरक्षा प्रणाली सुदृढ़ होती है, जीवनशक्ति (vitality) में सुधार होता है और मानसिक स्पष्टता (mental clarity) बढ़ती है। इसके अलावा ये एंटी-इंफ्लेमेटरी, मधुमेह-रोधी, और कैंसर-रोधी संभावित गुणों के लिए भी उपयोगी माने जाते हैं।

बीज: *विथानिया कोगुलांस* के बीज विशेषत: मधुमेह नियंत्रण में पारंपरिक रूप से उपयोग किए जाते हैं। ये रक्त शर्करा घटाने वाले यौगिकों का स्रोत होते हैं, जो रक्त ग्लूकोज स्तर को नियंत्रित करने में मदद करते हैं। अत: इन्हें प्राकृतिक उपाय के रूप में मधुमेह उपचार और स्वस्थ रक्त शर्करा नियंत्रण हेतु उपयोग किया जाता है। इसके बीज में 17.8 प्रतिशत फ्री शुगर, माल्टोज, फैटी ऑयल, डी गैलैक्टोज एवं डी अरबिनोज जैसे तत्व होते हैं।

फल: फल का उपयोग पारंपरिक रूप से पाचन सुधारने तथा कब्ज निवारण (laxative) के लिए किया जाता है। इसके अलावा, ये दूध जमाने (milk coagulation), पनीर बनाने में भी प्राकृतिक रूप से इस्तेमाल किये जाते हैं। ये यकृत रोग, अस्थमा, आंत संक्रमण, रक्त शुद्धिकरण और शीतलाकारी (sedative) के लिए भी पारंपरिक रूप से इस्तेमाल किए गए हैं। फल में दूध जमाने वाला एंजाइम, एस्टिरेज, फ्री अमीनो एसिड्स, एशेंशियल ऑयल, फैटी ऑयल, एल्कलॉइड्स, ट्रायकोन्टेन हाइड्रोकार्बन एवं डिहाइड्रॉस्टिग्मास्टीरॉल स्टेरॉल (dihydrostigmasterol sterol) पाये जाते हैं। फल का अर्क ऐल्कलॉइडल फ्रैक्शन भी प्रदान करता है।

***विथानिया कोगुलांस* के पादप-रसायन:** *विथानिया कोगुलांस* में पूर्जीदवसपकमे के अलावा जलीय एवं मिथेनॉलिक अर्क (aqueous and methanolic extracts) में कई अन्य पौष्टिक रासायनिक यौगिक भी पाए गये हैं, जैसे स्टेरॉयडल लैक्टोन्स, हार्मोन, टैनिन्स, फ्लावोनोइड, एल्कलॉइड, सैपोनिन, कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, अमीनो एसिड तथा ऑर्गेनिक एसिड। इसके बीज में 17.8 प्रतिशत फ्री शुगर, माल्टोज, फैटी ऑयल, डी गैलैक्टोज एवं डी अरबिनोज जैसे तत्व होते हैं।

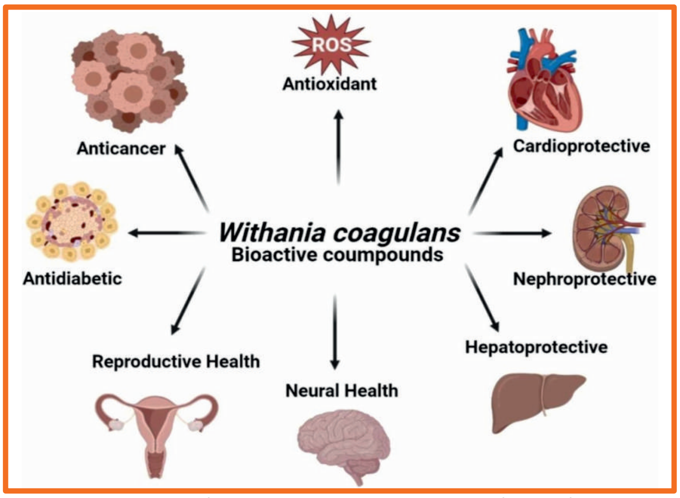

विथानिया कोगुलांस : विभिन्न चिकित्सा में उपयोग

Withanolide शब्द Withania के "withan" (withaniathus) "olide" (लैक्टोन का रासायनिक नाम) से मिलकर बना है। *W.coagulans* पौधे में कई प्रकार के withanolides पाए जाते हैं, जैसे Coagulin F, Coagulanolide, Withacoagulin और Coagulin G। एक नवीन withanolide, जिसकी संरचना कार्डियक ग्लाइकोसाइड्स जैसी है, फल से अलग कर इसका हृदय पर प्रभाव अध्ययन किया गया। इन यौगिकों के चिकित्सीय गुणों ने वैज्ञानिकों का ध्यान आकर्षित किया है। Withanolides के प्रतिरक्षा प्रणाली (immunostimulation और immunosuppression), हैमोपोइटिक सिस्टम और बोन मैरो पर प्रभाव देखे गए हैं। Glycowithanolides का केंद्रीय तंत्रिका तंत्र (CNS) पर भी प्रभाव पाया गया है। *विथानिया कोगुलांस* के withanolides को विभिन्न रासायनिक वर्गों में बाँटा गया है, जैसे Withanolide glycosides, Physalins, Nicandrenons, Acnistins, Perculatones और Withajardines आदि। इनकी जैव सक्रियता और औषधीय महत्व यह दर्शाते हैं कि यह पौधा पारंपरिक के साथ-साथ आधुनिक चिकित्सा में भी उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

सैप फ्लो मीटर- वृक्षों में जल उपयोग का वैज्ञानिक आकलन

अमिता पंवार एवं शरत कोठारी

वन पारिस्थितिकी एवं जलवायु परिवर्तन प्रभाग

परिचय

पौधों और पेड़ों में पानी का संचार वाष्पोत्सर्जन (ट्रांसपिरेशन) एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है, जिससे वे पोषक तत्वों को ऊपर तक पहुंचाते हैं और अपने तापमान को नियंत्रित करते हैं। इस प्रक्रिया को मापने के लिए एक विशेष उपकरण का उपयोग किया जाता है जिसे सैप फ्लो मीटर कहा जाता है। यह उपकरण पेड़ के तने के भीतर बहने वाले पानी की मात्रा और गति को मापता है, जिससे जल उपयोग की सटीक जानकारी मिलती है। यह उपकरण वैज्ञानिकों, कृषि विशेषज्ञों और वन अनुसंधानकर्ताओं के लिए अत्यंत उपयोगी है।

सैप फ्लो मीटर

सैप फ्लो मीटर एक वैज्ञानिक उपकरण है जो पौधों या पेड़ों के तने में प्रवाहित होने वाले ''सैप'' यानी जल मिश्रित पोषक तत्वों की मात्रा को मापता है। यह उपकरण यह पता लगाने में मदद करता है कि एक पौधा कितनी मात्रा में पानी का उपयोग कर रहा है।

कार्य सिद्धांत

सैप फ्लो मीटर मुख्यत: थर्मल डिसीपेशन तकनीक (Thermal Dissipation Technique) या हीट पल्स तकनीक (Heat Pulse Method) पर काम करता है। नीचे इसकी कार्यप्रणाली का संक्षिप्त वर्णन है-

1. **थर्मल सेंसर का प्रयोग**- तने में एक हीटर और तापमान सेंसर लगाए जाते हैं, एक ऊपर (अपस्ट्रीम) और एक नीचे (डाउनस्ट्रीम)। हीटर से हल्की गर्मी दी जाती है।
2. **तापमान में अंतर**- जब सैप (जल) तने के अंदर बहता है, तो यह गर्मी को ऊपर की ओर ले जाता है। सेंसर तापमान में हुए इस बदलाव को रिकॉर्ड करते हैं।
3. **गणना**- तापमान के इन अंतरालों से यह मापा जाता है कि पानी किस गति से और कितनी मात्रा में तने के भीतर प्रवाहित हो रहा है।

सैप फ्लो मीटर की स्थापना की प्रक्रिया

1. **उपयुक्त पेड़ का चयन**- उस पेड़ का चयन करना चाहिए जिसकी तना की सतह साफ हो और जिस पर मीटर आसानी से लगाया जा सके। पेड़ का स्वास्थ्य अच्छा होना चाहिए और तने का व्यास उपयुक्त होना चाहिए (आमतौर पर 10 से 40 सेमी)।
2. **उपकरणों की तैयारी**- सैप फ्लो मीटर किट (जैसे ICT या अन्य कंपनियों का), ड्रिल मशीन, थर्मो कपल (Temperature probes), इंसुलेटिव रैप/फोम,बैटरी/पावर सप्लाई, डेटा लॉगर या रियल-टाइम रीडर।
3. **सेंसर के लिए छेद बनाना**- तने में दो या तीन छोटे छेद बनाएं (आमतौर पर ऊपरी, मध्य और निचले भागों में) छेद 1.5 से 2 सेमी गहरे होते हैं और सेंसर के आकार के अनुसार बनते हैं। ऊपरी और निचले सेंसर तापमान मापते हैं, मध्य वाला हीटर होता है (यदि Heat Ratio Method का उपयोग हो रहा हो)।
4. **सेंसर को तने में लगाना**- थर्मल सेंसर को सावधानी से छेदों में डालें। ध्यान दें कि सेंसर पूरी तरह से टच में हों न अधिक ढीले हों, न अधिक टाइट।
5. **इंसुलेशन (Insulation)**- सेंसर के चारों ओर फोम, रैप या एल्युमिनियम शीट से इंसुलेशन करें ताकि बाहरी तापमान का असर न पड़े।
6. **डेटा लॉगर से कनेक्शन**- सेंसर को डेटा लॉगर से जोड़ें। सुनिश्चित करें कि सभी तार सही तरीके से कनेक्ट हों और पॉवर सप्लाई ठीक से काम कर रही हो।

7. **कैलिब्रेशन और टेस्टिंग**- इंस्टॉलेशन के बाद शुरू में एक दिन तक डेटा की निगरानी करें कि सेंसर सही रीडिंग दे रहे हैं या नहीं। आवश्यकता अनुसार कैलिब्रेशन करें।

8. **सुरक्षा और रख-रखाव**- उपकरणों को वर्षा, धूप और जानवरों से बचाने के लिए उचित सुरक्षा कवच लगाएं। नियमित रूप से डेटा डाउनलोड करें और उपकरणों की जांच करें।

कार्यप्रणाली

सैप फ्लो मापने के उद्देश्य

1. **जल उपयोग दक्षता (Water Use Efficiency) को जानना**- नीम जैसे शुष्क जलवायु वाले पेड़ों के लिए यह जानना जरूरी होता है कि वे कितने पानी का उपयोग करते हैं।

2. **सूखे में पेड़ की सहनशीलता समझना**- सैप फ्लो मीटर यह दर्शाता है कि सूखे के दौरान पेड़ कितनी मात्रा में जल का उपभोग करता है।

3. **कार्बन उत्सर्जन अध्ययन में सहयोग**- जल उपयोग का डेटा पेड़ों के कार्बन संतुलन का अनुमान लगाने में सहायक होता है।

4. **वन संरक्षण और जल प्रबंधन योजना**- इससे यह तय किया जा सकता है कि कब और कितनी मात्रा में पेड़ों को सिंचाई की आवश्यकता है।

शुष्क क्षेत्र की चार अध्ययन की गई प्रजातियों की मासिक औसत वाष्पोत्सर्जन दर (transpiration rate) को उनके प्रति इकाई बायोमास और सैप एरिया (sap area) के अनुसार दर्शाया गया है। विभिन्न वृक्ष प्रजातियों की जल उपयोग दक्षता (Water Use Efficiency & WUE), जो प्रति इकाई सैपवुड क्षेत्र और प्रति इकाई बायोमास पर जल उपयोग के रूप में मापी गई है, उनके भिन्न-भिन्न पर्यावरणीय परिस्थितियों के अनुसार शारीरिक (physiological) अनुकूलन को दर्शाती है, जिसे तालिका में प्रस्तुत किया गया है।

पेड़ की प्रजाति प्रति वर्ग सेंटीमीटर सतह क्षेत्र (SAP AREA) पर पानी की खपत (लीटर प्रतिदिन) प्रति किलोग्राम बायोमास पर पानी की खपत (लीटर प्रतिदिन)

पेड़ की प्रजाति	प्रति वर्ग सेंटीमीटर सतह क्षेत्र (SAP AREA) पर पानी की खपत (लीटर प्रतिदिन)	प्रति किलोग्राम बायोमास पर पानी की खपत (लीटर प्रतिदिन)
नीम *(Azadirachta indica)*	0.219 लीटर/दिन/से. मी	0.143 लीटर/दिन/किग्रा
विलायती बबूल *(Prosopis juliflora)*	0.057 लीटर/दिन/से. मी	0.0185 लीटर/दिन/किग्रा
सागवान *(Tectona grandis)*	0.112 लीटर/दिन/से. मी	0.066 लीटर/दिन/किग्रा
धोक *(Anogeissus latifolia)*	0.143 लीटर/दिन/से. मी	0.034 लीटर/दिन/किग्रा

अध्ययन की गई प्रजातियों में सैप फ्लो मीटर के लाभ:-

नीम: प्रति इकाई सैप एरिया (0.219 लीटर/दिन/से.मी) और प्रति इकाई बायोमास (0.143 लीटर/दिन/किग्रा) के आधार पर सबसे अधिक जल उपयोग दिखाता है, जो इसकी सक्रिय जल उपयोग रणनीति को दर्शाता है। इसका तात्पर्य है कि नीम जल को परिवहन और उपयोग करने में अत्यंत सक्षम है, जिससे यह अर्ध-शुष्क (semi-arid) परिस्थितियों में भी उच्च वाष्पोत्सर्जन दर बनाए रखता है। जल को प्रभावी ढंग से अवशोषित और उपयोग करने की इसकी क्षमता इसे उन क्षेत्रों में एक मजबूत प्रतियोगी बनाती है, जहाँ नमी की उपलब्धता अनियमित होती है।

जल उपयोग की समझ: नीम के जल उपभोग को मापकर सूखे क्षेत्रों में इसकी सिंचाई आवश्यकताओं का पता चलता है।

पौधे की सेहत: सैप फ्लो के मापन से नीम के स्वास्थ्य और जल तनाव का अंदाजा लगाया जा सकता है।

पर्यावरणीय अध्ययन: नीम के जल संतुलन को समझकर स्थानीय पारिस्थितिकी का संरक्षण किया जा सकता है।

विलायती बबूल: इसके विपरीत, दोनों मापदंडों में सबसे कम मान दर्शाता है। प्रति सैप एरिया 0.057 लीटर/दिन/से.मी. और प्रति बायोमास 0.0185 लीटर/दिन/किग्रा। यह इसकी अत्यंत सतर्क जल उपयोग रणनीति को दर्शाता है, जो इसके शुष्क वातावरण में अनुकूलन

के लिए प्रसिद्ध है। यह पेड़ न्यूनतम जल हानि के साथ अपने विकास को बनाए रखते हुए जल संरक्षण की उच्च क्षमता प्रदर्शित करता है, जिससे यह जल-संकटग्रस्त क्षेत्रों के लिए अत्यंत उपयुक्त बनता है।

जल प्रबंधन: विलायती बबूल एक जल खपत करने वाला पेड़ है, इसका सैप फ्लो मापन भूजल स्तर की गिरावट को रोकने में मदद करता है।

वन संरक्षण: जल उपयोग के आंकड़ों के आधार पर शुष्क क्षेत्रों में वन पुनर्वास की रणनीति बनाई जा सकती है।

सागवान: सागवान की जल उपयोग दर मध्यम पाई गई- प्रति सैपवुड एरिया 0.112 लीटर/दिन/से.मी. और प्रति बायोमास 0.066 लीटर/दिन/किग्रा। एक पतझड़ी (deciduous) प्रजाति होने के कारण, इसकी जल उपयोग दर मौसमी रूप से बदलती रहती है- मानसून के दौरान, जब मिट्टी में नमी प्रचुर मात्रा में होती है, इसकी दर अधिक होती है। यह संकेत देता है कि सागौन उन पर्यावरणों के लिए अनुकूल है जहाँ गीले और सूखे मौसम स्पष्ट रूप से होते हैं। यह तब अधिक जल अवशोषण करता है जब परिस्थितियाँ अनुकूल होती हैं और सूखे मौसम में वाष्पोत्सर्जन को कम कर देता है।

धोक: धोक एक महत्वपूर्ण वानस्पतिक प्रजाति है, जो भारत के शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्र में पाई जाती है। धोक का प्रति इकाई सैप एरिया पर जल उपयोग मध्यम (0.143 लीटर/दिन/से.मी.) है, लेकिन प्रति बायोमास जल उपयोग अपेक्षाकृत कम (0.034 लीटर/दिन/किग्रा) पाया गया। यह दर्शाता है कि यह प्रजाति वाष्पोत्सर्जन के लिए जल का कुशलतापूर्वक उपयोग करती है, लेकिन इसका कुल बायोमास-विशिष्ट जल उपयोग कम रहता है। यह अनुकूलन अर्ध-शुष्क पारिस्थितिक तंत्रों में सतत वृद्धि बनाए रखने के लिए एक प्रभावी रणनीति को दर्शाता है। कम बायोमास-विशिष्ट जल उपयोग उच्च जल उपयोग दक्षता को इंगित करता है, जिससे *A.latifolia* कम जल हानि के साथ अपने जैविक कार्यों को बनाए रख सकता है।

जल उपयोग का सटीक मापन: इस पेड़ में सैप फ्लो मीटर द्वारा जल प्रवाह की सही मात्रा ज्ञात होती है, जिससे पता चलता है कि पेड़ कितनी मात्रा में जल का उपयोग कर रहा है।

वन संरक्षण और पुनर्वास:- शुष्क क्षेत्रों में इस प्रजाति के जल उपयोग को समझकर वनीकरण योजनाओं को बेहतर बनाया जा सकता है, जिससे स्थानीय पारिस्थितिकी तंत्र का संरक्षण होता है।

ये निष्कर्ष अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में वनीकरण (Afforestation) और पुनर्वनीकरण (reforestation) के प्रयासों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि प्रजाति-विशिष्ट जल उपयोग की समझ से यह तय करने में सहायता मिलती है कि कौन से पेड़ टिकाऊ वन प्रबंधन और पारिस्थितिकी तंत्र पुनर्स्थापन के लिए उपयुक्त होंगे।

किसानों के लिए सैप फ्लो मीटर का उपयोग और फायदे

सिंचाई प्रबंधन में सहायता:- सैप फ्लो मीटर से पता चलता है कि पौधे कितनी मात्रा में पानी ले रहे हैं, इससे किसान सही समय पर और सही मात्रा में पानी दे सकते हैं,इस तरह पानी की बर्बादी कम होती है और फसल बेहतर होती है।

सूखा सहनशीलता का अध्ययन:- यह तकनीक यह माप सकती है कि पौधा सूखे के समय कितनी मात्रा में पानी उपयोग कर पा रहा है।

वनों और पर्यावरण का संरक्षण:- शुष्क क्षेत्रों में सैप फ्लोमीटर के उपयोग को समझकर वनीकरण योजनाओं का बेहतर बनाया जा सकता है, जिससे स्थानी पारिस्थितिकी तंत्र का संरक्षण होता है। बड़े पेड़ों में सैप फ्लो को मापकर यह समझा जा सकता है कि वे पर्यावरणीय परिवर्तन के प्रति कितने संवेदनशील हैं।

पौधों के स्वास्थ्य की निगरानी:- यदि किसी पौधे में सैप फ्लो कम हो रहा है, तो यह संकेत हो सकता है कि वह तनाव (stress) में है। किसानों के लिए सैप फ्लो मीटर का उपयोग और फायदे

जल संरक्षण:- जल संसाधन सीमित होते हैं, खासकर सूखे क्षेत्रों में, सैप फ्लो मीटर के जरिये जल उपयोग को नियंत्रित करके पानी की बचत की जा सकती है। पानी की बचत और स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए पेड़ के जल उपयोग का अध्ययन अनिवार्य होता है, जिससे पारिस्थितिकीय संतुलन बना रहता है,विभिन्न प्रजातियों के बीच देखे गए अंतर इस बात को उजागर करते हैं कि वृक्ष का आकार, उसकी शारीरिक विशेषताएं और पर्यावरणीय अनुकूलन जल उपयोग में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, नीम एक उच्च जल उपयोग करने वाली प्रजाति के रूप में उभरता है, *P.juliflora* सबसे जल-दक्ष प्रजाति है, जबकि सागौन और धोक मध्यम रणनीतियाँ अपनाते हैं।

फसल की सेहत की निगरानी:- सैप फ्लो मीटर से पौधों में जल तनाव का पता चलता है, अगर पानी की कमी हो रही है तो किसान तुरंत उपाय कर सकते हैं, इससे फसल की उपज बढ़ती है और नुकसान कम होता है।

निष्कर्ष

सैप फ्लो मीटर न केवल जल प्रवाह को मापता है, बल्कि जल प्रबंधन, सिंचाई योजना, और पौधों के जल तनाव की निगरानी में भी मदद करता है। मौसम के अनुसार जल प्रबंधन, मौसम के अनुसार पौधों की जल आवश्यकता बदलती रहती है। सैप फ्लो मीटर से इसका सही अंदाजा लगाकर सिंचाई योजना बनाई जा सकती है। इसके उपयोग से किसान और वैज्ञानिक पौधों की जल उपयोग क्षमता को बेहतर तरीके से समझ पाते हैं, जिससे खेती और वन संरक्षण दोनों में सुधार होता है।

संस्थान की विस्तार गतिविधियाँ

वन विज्ञान केंद्र प्रशिक्षण: वन विज्ञान केंद्र के अंतर्गत किसानो एवं वन विभाग राजस्थान के क्षेत्र पदाधिकारियो के लिए आफरी संस्थान द्वारा तीन विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किये गए। प्रथम प्रशिक्षण वन विज्ञान केन्द्र, उदयपुर के अंतर्गत विद्या भवन कृषि विज्ञान केन्द्र, बड़गांव, उदयपुर में ''शुष्क क्षेत्रों में सतत वानिकी संरक्षण के लिए वृक्षारोपण तकनीक'' विषय पर तीन दिवसीय (दिनांक 27 फरवरी 2025 से 1 मार्च 2025 तक) प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किया गया जिसमें 47 प्रशिक्षणार्थियों ने भाग लिया। द्वितीय प्रशिक्षण वन विज्ञान केन्द्र, नवसारी के अंतर्गत वानिकी महाविद्यालय, नवसारी कृषि विश्वविद्यालय, नवसारी में ''गुणवत्तायुक्त पौध सामग्री एवं कृषि वानिकी'' विषय (24 मार्च से 26 मार्च, 2025) आयोजित किया गया जिसमें 57 वन विभाग के क्षेत्र पदाधिकारियों एवं किसानों ने भाग लिया। तीसरा प्रशिक्षण वन विज्ञान केन्द्र, बीकानेर के अंतर्गत ''क्षरित शुष्क भूमि का पुनर्वनीकरण'' विषय पर (24-26 जून, 2025 तक) आयोजित किया गया जिसमें 30 प्रशिक्षणार्थियों ने भाग लिया। इन प्रशिक्षण कार्यक्रम के नोडल अधिकारी डॉ. बिलास सिंह, मुख्य तकनीकी अधिकारी, विस्तार प्रभाग थे।

प्रकृति कार्यक्रम: आफरी संस्थान द्वारा केंद्रीय एवं नवोदय विद्यालयों के विद्यार्थियों के लिए आयोजित प्रकृति कार्यक्रम के तहत 21 फरवरी 2025 को केन्द्रीय विद्यालय, पाली में प्रकृति कार्यक्रम का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम में कक्षा 8जी एवं 9जी के 79 छात्र-छात्राओं ने हिस्सा लिया। 24 फरवरी 2025 को केन्द्रीय विद्यालय, तिवरीं में प्रकृति कार्यक्रम का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम में कक्षा 8जी, 9जी एवं 11जी के 75 छात्र-छात्राओं ने हिस्सा लिया। 25 फरवरी 2025 को जवाहर नवोदय विद्यालय, तिलवासनी में प्रकृति कार्यक्रम का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम में कक्षा 8जी, 9जी एवं 11जी के लगभग 150 छात्र-छात्राएं लाभान्वित हुए। 15 अप्रैल 2025 को पी.एम. श्री के.वी. नागौर (राजस्थान) के 108 छात्रों के एक समूह ने पाँच संकाय सदस्यों के साथ आफरी के निर्वचन केंद्र का दौरा किया। इन कार्यक्रमों में कार्यक्रम में कुसुम लता परिहार ने प्रकृति कार्यक्रम एवं पर्यावरण के लिए जीवन शैली विषय पर एवं अनिल सिंह चौहान ने आफरी द्वारा पर्यावरण एवं जैवविविधता संरक्षण में किए जा रहे कार्यों के साथ आफरी द्वारा विकसित तकनीकों के बारे में व्याख्यान दिया। छात्र-छात्राओ को पौधारोपण तकनीक की विस्तृत जानकारी दी।

अन्य गतिविधियाँ:

- दिनांक 9-19 जनवरी 2025 तक जोधपुर में आयोजित ''उत्सव-2025''-पश्चिमी राजस्थान उद्योग हस्तशिल्प मेला में आफरी, जोधपुर ने अपने अनुसंधान कार्यों के प्रचार-प्रसार हेतु प्रदर्शनी लगाई जिसका उद्घाटन राजस्थान के मुख्यमंत्री माननीय श्री भजनलाल ने किया। दिनांक 10 फरवरी, 2025 को पीएम श्री महात्मा गाँधी विद्यालय, जोधपुर मे आयोजित कैरियर मेला में आफरी जोधपुर ने अपने अनुसंधान कार्यों के प्रचार-प्रसार हेतु प्रदर्शनी लगायी।
- 76वां गणतंत्र दिवस हर्षोल्लास से मनाया गया। इस अवसर पर संस्थान के निदेशक डॉ. तरुण कान्त ने ध्वजारोहण किया। गणतंत्र दिवस समारोह में संस्थान के समस्त अधिकारीगण/वैज्ञानिकगण/तकनीकी/गैर तकनीकी कार्मिक/शोधार्थी उपस्थित थे।
- मरुस्थलीकरण रोक एवं अवक्रमित भूमि के पुन:वन्यीकरण हेतु प्रशिक्षण का आयोजन MOEF&CC के उत्कृष्टता केंद्र, स्थायी भूमि प्रबंधन, (CoE-SLM, ICFRE) द्वारा ''मरुस्थलीकरण रोक एवं अवक्रमित भूमि के पुन:वन्यीकरण हेतु रणनीतियाँ'' विषय पर तीन दिवसीय क्षेत्रीय प्रशिक्षण 5-7 फरवरी, 2025 को आयोजित हुआ।
- भारती एयरटेल फाउंडेशन और शिक्षा विभाग के सयुंक्त तत्वाधान में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के तहत राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय लुणावास खारा के 15 विद्यार्थियों का 19-28 फरवरी 2025 तक 7 दिवसीय इंटर्नशिप में आयोजित की गई।
- **विश्व वानिकी दिवस:** 21 मार्च 2025 को विश्व वानिकी दिवस का आयोजन मुख्य अतिथि प्रसन्पुरी गोस्वामी वरिष्ठ पर्यावरणविद के मुख्य आतिथ्य में हुआ।
- **वन मृदा स्वास्थ्य कार्ड (FSHC) का अनावरण:** 21 मार्च 2025 को विश्व वानिकी दिवस के अवसर पर श्रीमती भावना शर्मा, वैज्ञानिक-ई और परियोजना अन्वेषक और उनकी टीम ने द्वारा तैयार किये गए वन मृदा स्वास्थ्य कार्ड (FSHC), AICRP के तहत के माननीय मुख्यमंत्री श्री भजन लाल शर्मा द्वारा ''विकसित राजस्थान'' समारोह में जारी किए गए। 25 मार्च 2025 को दादरा नगर हवेली एवं दमन और दीव के लिए वन मृदा स्वास्थ्य कार्ड (FSHC) जारी किए।

- **पृथ्वी दिवसः** आफरी, जोधपुर में दिनांक 22 अप्रैल 2025 को पृथ्वी दिवस कार्यक्रम का आयोजन आफरी निदेशक डॉ. तरुण कान्त की अध्यक्षता में किया गया।
- **विश्व पर्यावरण दिवसः** आफरी, जोधपुर द्वारा दिनांक 5 जून, 2025 को विश्व पर्यावरण दिवस-2025 का आयोजन एम.आर. बालोच, भा.व.से, पूर्व निदेशक, आफरी, जोधपुर के मुख्य आतिथ्य एवं निदेशक आफरी, डॉ. तरुण कान्त की अध्यक्षता में मनाया गया।
- **विश्व मरुस्थलीकरण एवं सूखा रोकथाम दिवसः** विश्व मरुस्थलीकरण एवं सूखा रोकथाम दिवस 17 जून 2025 को आफरी, जोधपुर में एक दिवसीय राष्ट्रीय कार्यशाला का आयोजन ''मरुस्थलीकरण एवं सूखा रोकथाम की रणनीतियां'' विषय पर आयोजित किया गया। केंद्रीय पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्री श्री भूपेंद्र यादव इस कार्यक्रम में मुख्य अतिथि थे, केंद्रीय पर्यटन और संस्कृति मंत्री श्री गजेंद्र सिंह शेखावत और सांसद (राज्यसभा) श्री राजेंद्र गहलोत, वन महानिदेशक, श्री सुशील कुमार अवस्थी, अपर महानिदेशक (वन) ए.के.मोहंती, आईसीएफआरई महानिदेशक श्रीमती कंचन देवी, आफरी निदेशक डॉ. तरुण कांत तथा अन्य गणमान्य व्यक्ति और केंद्र तथा राज्य सरकार के अधिकारी उपस्थित थे।
- **अंतर्राष्ट्रीय योग दिवसः** आफरी, जोधपुर द्वारा 11वां अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस थीम-''योगा फॉर वन अर्थ, वन हेल्थ'' पर मनाया गया।

प्रशिक्षणः

- वनपाल, नर्सरी प्रभारियों एवं एनजीओ हेतु AICRP-10 परियोजना के अंतर्गत दो दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम 25-26 मार्च 2025 को ''कुछ समस्यागत प्रजातियों की नर्सरी प्रौद्योगिकी'' विषय पर आयोजित आयोजित हुआ। जिसमें 20 प्रतिभागी सहित आफरी के अधिकारियों एवं वैज्ञानिकों ने भाग लिया। इस प्रशिक्षण के समन्वयक डॉ. नवीन कुमार बोहरा, वैज्ञानिक-सी थे।
- 07 से 09 मई, 2025 तक MOEF&CC द्वारा वित्त पोषित प्रशिक्षण ''मृदा एवं जल संरक्षण में वन की भूमिका'' विषय पर प्रशिक्षण समन्वयक डॉ. संगीता सिंह, समूह समन्वयक (शोध) द्वारा आयोजित किया गया। विभिन्न सरकारी विभागों के वर्ग-'ख' कार्मिकों के लिए आयोजित जिसमें कुल 36 कार्मिक ने भाग लिया।
- कैम्पा विस्तार के अंतर्गत 30 जून 2 जुलाई, 2025 तक तीन दिवसीय प्रशिक्षण ''सतत दीमक प्रबंधन : तकनीक एवं उत्कृष्ट प्रयोग'' विषय पर किसान, छात्र, एवं स्वयंसेवी संस्था के सदस्यों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित हुआ। डॉ. तन्मय कुमार भोई, वैज्ञानिक-सी इस प्रशिक्षण कार्यक्रम के समन्वयक थे। इस प्रशिक्षण कार्यक्रम से 20 प्रतिभागी लाभान्वित हुए।

पुरस्कार

- आफरी, जोधपुर के सहायक निदेशक (राजभाषा) श्री कैलाश चन्द गुप्ता को गणतंत्र दिवस के अवसर पर आईसीएफआरई-लाईफ टाइम मेरिटोरियस सर्विस अवार्ड-2024 परिषद मुख्यालय, देहरादून में महानिदेशक, महदोया, श्रीमती कंचन देवी, भा.व.से. द्वारा प्रदान किया गया।
- डॉ. तरुण कांत, निदेशक एवं वैज्ञानिक ''जी'' को 24 से 26 फरवरी 2025 तक बिट्स पिलानी के.के. बिड़ला गोवा परिसर में आयोजित प्लांट टिशू कल्चर एसोसिएशन के 46वें अधिवेशन एवं प्लांट बायोटेक्नोलॉजी में वर्तमान रुझान एवं चुनौतियों पर संगोष्ठी (सीटीसीपीबी-2025) में प्रतिष्ठित 'प्रोफेसर एफसी स्टीवर्ड मेमोरियल अवार्ड' से सम्मानित किया गया।

पदोन्नति/कार्यभार ग्रहण/स्थानान्तरण/कार्य-मुक्त/सेवानिवृत्त/नियुक्ति

(अवधि 01 जनवरी, 2025 से 30 जून, 2025 तक)

1. श्री तिलोका राम, कार्यालय परिचारक- अधिवर्षिता आयु पर दिनांक 31.01.2025 को सेवानिवृत्त हुए।
2. श्री कैलाश चन्द गुप्ता, सहायक निदेशक राजभाषा, अधिवर्षिता आयु पर दिनांक 31.03.2025 को सेवानिवृत्त हुए।
3. श्री मनोज चौहान, मुख्य तकनीकी अधिकारी, अधिवर्षिता आयु पर दिनांक 31.04.2025 को सेवानिवृत्त हुए।
4. श्री सरज लाल मीणा, मुख्य तकनीकी अधिकारी, अधिवर्षिता आयु पर दिनांक 31.05.2025 को सेवानिवृत्त हुए।
5. डॉ. हेमलता शर्मा, अनुभाग अधिकारी को पदोन्नति उपरान्त स्थानान्तरण टी.एफ.आर.आई., जबलपुर हेतु दिनांक 28.03.2025 को कार्यमुक्त किया गया।
6. श्री लक्ष्मण सिंह राठौड़, अनुभाग अधिकरी को पदोन्नति उपरान्त स्थानान्तरण आई.एफ.जी.टी.बी., कोयंम्टूर हेतु दिनांक 07.04.2025 को कार्यमुक्त किया गया।
7. श्री सौरभ, बाग, वैज्ञानिक-बी नियुक्ति दिनांक 16.01.2025
8. श्री नीरज कुमार गुप्ता, अवर सचिव ने मुख्यालय से स्थानान्तरण पश्चात् दिनांक 26.06.2025 को आफरी संस्थान में कार्यभार ग्रहण किया गया।

संस्थान की विभिन्न गतिविधियों की झलक

पत्रिका में प्रकाशन हेतु सामग्री, सुझाव एवं जानकारी निम्न पते पर भेजें

रमेश बिश्नोई, भा.व.से. **(संपादक, आफरी दर्पण)**

प्रभागाध्यक्ष, विस्तार प्रभाग, भा.वा.अ.शि.प.-शुष्क वन अनुसंधान संस्थान (आफरी)

न्यू पाली रोड, जोधपुर 342005

दूरभाष: 0291-2729198 ई-मेल kr171@ifs.nic.in